सचित्र

नरदेह-परिचय।

"भेषज-विधान" रचयिता द्वारा प्रणीत

और

एक प्रवीण चिकित्सक और ग्रन्थकार द्वारा

संशोधित और परिवर्द्धित।

श्रीमहेशचन्द्र भट्टाचार्य्य एण्ड को०

द्वारा

संगृहीत और प्रकाशित।



इकानमिक फार्मेसी

८४ नं० क्लाइव स्ट्रीट,

कलकत्ता।

 १९३४ [मूल्य १॥)

प्रकाशक—
श्रीफकीरदास सरकार
एम० भट्टाचार्य एण्ड को०
८४ नं० क्लाइव स्ट्रीट
कलकत्ता।



मुद्रक—
श्रीशैलेन्द्रचन्द्र भट्टाचार्य
इकानमिक प्रेस
२५ नं० रायबागान स्ट्रीट
कलकत्ता।

भूमिका ।

इतने दिन बाद अपने हिन्दी पाठक पाठिकाओंके हाथोंमें हिन्दी "नरदेह-परिचय" अर्पण करते हुए बहुत प्रसन्नता हो रही है । यद्यपि यह ग्रन्थ प्रधानत: सब तरहकी गृह चिकित्सा में सहायता पहुँचानेके लिये लिखा गया है, परन्तु पूरी आशा है, कि शरीर तत्वका ज्ञान प्राप्त करनेके इच्छुक आबाल-वृद्ध-वनिता तथा चिकित्सक, सबको ही इससे पूरा पूरा लाभ होगा ।

सुकुमार-मति बालकोंको नर-देहके सम्बन्धमें शिक्षा देते समय जननेन्द्रिय सम्बन्धी विषय छोड़ देना चाहिये ।

इसमें नर-देह सम्बन्धी जानने योग्य आवश्यक बातें बता देनेकी चेष्टा तो की ही गयी है, साथ ही साथ स्वास्थ्य-रक्षा, खाद्य, चिकित्सा प्रदर्शिका—औषध प्रदर्शिका, आदि ऐसे विषय और भी मिला दिये गये हैं, जो स्वास्थ्य-रक्षा और चिकित्सामें पूर्ण रूपसे सहायक होंगे । आशा है जिनके लिये यह ग्रन्थ लिखा गया है, उनका अवश्य ही उपकार होगा ।

निवेदक—

एम० भट्टाचार्य एण्ड को०

प्रकाशक ।

विषय-सूची ।

विषय	पृष्ठ
मुखबन्ध ...	१-२
मानव शरीरके अङ्गोंके नाम	२
(१) रक्त	८
(२) रक्तवहा नाड़ी	१०
(३) स्नायु	११
(४) अस्थि	११
(५) उपास्थि	१४
(६) मज्जा	१५
(७) मांसपेशी	१५
(८) मेद	१८
(९) त्वचा	१८
(१०) लोमकूप	२०
(११) ग्रन्थियाँ	२१
(१२) तन्तु	२२
(१३) केश या लोम	२२
(१४) नख	२३
१। मुण्ड	२५
(१) मस्तिष्क	२५
(२) मुखमण्डल	३१
(क) आँख	३१
(ख) कान	३६
(ग) नाक	४०
(घ) मुखगह्वर	४३
(ङ) ओंठ	४४
(३) स्वरयन्त्र	४४
(४) अन्नवहानाली	४६
(५) तालु	४६
(६) दन्त	४७
(७) जीभ	५२
२। धड़	५३
(१) वक्षोगह्वर	६०
(क) हृदपिण्ड	६०
(ख) फुसफुस	७१
(ग) श्वासनाली	७५
(घ) अन्नवहानाली	७८
(२) उदर-गह्वर	७९
(क) पाकस्थली	७९

विषय	पृष्ठ
(ख) अन्त्र	८५
(१) क्षुद्र अन्त्र	८६
(२) वृहद् अन्त्र	८७
(ग) यकृत	८८
(घ) प्लीहा	८९
(ङ) क्लोम ग्रन्थि	८९
(च) मूत्र ग्रन्थि	९०
(छ) मूत्राशय	९२
(ज) उपस्थ या जननेन्द्रिय	९३
१। पु० जननेन्द्रिय	९४
(१) शिश्न	९५
(२) मुष्क	९७
२। स्त्रीजननेन्द्रिय	१००
(१) वहिरङ्ग	१००
(क) कामाद्रि	१०२
(ख) वृहद्भगोष्ठद्वय	१०२
(ग) क्षुद्रभगोष्ठद्वय	१०३
(घ) भगाङ्कुर	१०३
(ङ) योनिद्वार	१०४
(२) अन्तरङ्ग	१०५
(क) योनि	१०५
(ख) जरायु	१०७
(ग) डिम्बकोष	१०९
(घ) फालल नल	१११
(३) उपाङ्ग या स्तन	१११
३। गर्भाधान	११३
(क) गर्भ-विज्ञान	११३
(ख) गर्भाशयमें परिवर्त्तन	११४
(ग) नाल	११७
(घ) कमल	११७
(ङ) कमलके कार्य	११९
(च) गर्भाशयमें भ्रूणका पोषण	११९
(छ) गर्भकी वृद्धि	१२१
(ज) उदय	१२६
(झ) प्रसव	१२६
(ञ) नाल काटना	१२८
(ट) सूतिकागार	१२९

विषय पृष्ठ

(ट) भ्रूणमें रक्त संचालन १३०

(ड) नाभि शिरा १३३

(च) प्रसवके बादका परिवर्त्तन १३६

शाखाद्वय या हाथ पैर

१। उर्द्ध शाखा या दोनों बाहु १३८

(क) प्रगण्डकी अस्थियाँ .. १३८

(ख) प्रकोष्ठकी अस्थियाँ १४०

(ग) हाथकी अस्थियाँ १४१

२। निम्न शाखा या दोनों पैर १४४

(क) उरुकी अस्थि १४५

(ख) जँघाकी अस्थियाँ १४७

विषय पृष्ठ

(ग) पैरकी अस्थियाँ १४८

खाद्य क्या और कितनी तरहका है १५०

(क) जैव पदार्थ १५१

(ख) अजैव पदार्थ १५३

(ग) खाद्यकी प्रयोजनीयता १५५

(घ) खाद्योज १५६

(ङ) खाद्योजके गुण १५६

(च) खाद्यका गुण १६१

(छ) हमेशा व्यवहारके कई खाद्य १६२

उपसंहार १६६

स्वास्थ्यरक्षा प्रणाली १६८

अजीर्ण रोगियोंके प्रति उपदेश . १७५

औषध प्रदर्शिका १७८

"श्री"

नरदेह-परिचय।



मनुष्यकी देहकी तरह विचित्र और अपूर्व कौशल-भरा यन्त्र इस संसारमें कोई दूसरा कहीं भी दिखाई नहीं देता। इसके साथ किसी भी यन्त्रकी तुलना नहीं हो सकती। इसी लिये, इस यन्त्रके विषयमें पुरुष और स्त्रियाँ सबको ही जानकारी रखना बहुत आवश्यक है। इनमें गृहस्थीके अधिकांश काम स्त्रियाँ ही करती हैं।

सन्तान या शिशु-पालन।—भोजन इत्यादि बहुतसे जरूरी पदार्थ तैयार करना और रोगीकी सेवा सुश्रूषा वगैरह काम हमारे देशमें अधिकांश, घरकी स्त्रियाँ ही किया करती हैं। इन सब कामोंको अच्छी तरह करनेके लिये, मानव देहके सम्बन्धमें साधारण ज्ञान रखना बहुत ही जरूरी है। सुशिक्षित और धार्मिक स्त्रियाँ हमारे इस छोटे गृह राज्यकी अधिष्ठात्री देवी स्वरूपा हैं। यदि उनको इस शरीरके सम्बन्धमें सहज सहज विषयोंकी अच्छी तरह शिक्षा दे दी जाये, तो हममें पारिवारिक सुख और

शान्ति बहुत सरलतासे आ जायगी। इसीलिये, यह नर-देह परिचय ग्रन्थ खूब सरल भाषामें पहलेकी अपेक्षा कुछ बढाकर विस्तृत भावसे लिखा गया है।

इस जीवित, नर-देहमें आत्माका निवास रहता है। जब तक इस शरीरमें प्राण रहता है, उतने ही दिनोंतक इसका काम बहुत ही ठीक ठीक और विचित्र रूपसे चला करता है।

मनुष्य शरीरकी गठन अर्थात् हड्डी, शिरा, फेफडा वगैरहकी संख्या, प्रकृति, आकार और उनके काम आदि इस पुस्तकमें लिखे जायेंगे।

मानव शरीरके अङ्गोंके नाम।

मनुष्यके शरीरमें सब अङ्गोंका राजा सर (Head) है। इसके भीतर मस्तिष्क (Brain) नामकी एक ऐसी चीज है, जिससे समस्त अङ्गो और इन्द्रियोंका परिचालन होता है। सरमें ऊपरकी ओर ललाट (Fore-head) है। उसके नीचे दाहिने बाये दो आँखे (Eyes) है, जिनसे हम लोग देखते है। दोनो आँखोके ठीक बीचोबीचमें नीचेकी ओर नाक (Nose) है जो घ्राणेन्द्रिय या सूंघनेकी इन्द्रिय है। इसके ऊपर भवे (Eye brows) है। नाक के नीचे मुँह (Mouth) और इन दोनोंके दाहिने बाएँ

नीचे, दो ओंठ (Lips) होते हैं। ऊपरवाला ओठ ऊर्ध्वोष्ठ (Upper lip) और नीचेका ओठ निम्नोष्ठ (Lower lip) कहलाता है। ये दोनों ही हनुसे लगे हुए हैं। ऊपरका ओठ ऊर्ध्व हनुसे (Upper jaw) और नीचेवाला निम्न हनु (Lower jaw) से जुड़ा हुआ है। हनुमें ही दाँत (Teeth) रहते हैं, जिनसे हमलोग चबा चबाकर खाते हैं। ऊपरके ओठपर जवानीमें केश आ जाते हैं, उन्हें मूछें (Moustaches) और ठुड्डीमें जो केश रहते हैं, उन्हें दाढ़ी कहते हैं।

अब मुँहके भीतर देखिये। मुँहका भीतरी भाग मुख-गह्वर कहलाता है। इसमें दाँत, दाँतोंकी जड़में मसूड़े (Gums) रहते हैं। ऊपरके दाँतोंके पीछे तालु (Palate) और तालुके पिछले भागमें एक घण्टीसी लटकती रहती है, उसे अलिजिह्वा या शुण्डिका (Uvula) कहते हैं। दाँतोंके पीछे जीभ (Tongue) रहती है। जीभकी जड़में दोनों ओर लाला ग्रन्थियाँ (Salivary glands) हैं और जीभके पीछे का गोल भाग कण्ठ (Fauces) कहलाता है। जीभकी जड़में स्वरयन्त्र (Larynx) और इसके बाद अन्नवहा नाली या अन्नमार्ग (Alimentary canal) रहता है। आँखोंके दोनों ओर अगल बगल कान (Ears) हैं। कान और माथेके बीचका भाग कनपटी (Temple) और कान के पीछे मध्य रेखामें जो सिरका भाग है, उस भागको मन्या (Nape of the neck) कहते हैं।

सिर और धड़ (Head and Body) के बीचका भाग गर्दन (Neck) कहलाता है। गर्दनके बीचकी हड्डी कण्ठकास्थि (Hyoid bone) कहलाती है। स्वरयन्त्रके नीचेवाली नली टेंटुवा (Trachea) कहलाती है। गर्दन का पिछला भाग इकाटिका (Back of neck) कहलाता है। बस, इसी स्थानसे रीढ़ अर्थात् मेरुदण्ड आरम्भ हो जाता है जो बराबर नीचे गुदा-स्थानके कुछ ऊपर तक चला गया है।

माथा और गर्दनके बाद शरीरके बीचका भाग धड़ आता है। धड़का अगला भाग अर्थात् सामनेवाला भाग वक्ष या वक्षस्थल (Thorax) है। इसके दाहिने बाँएँ लम्बी लटकती हुई दो भुजाएँ (Arms) हैं। इनके बीच की हड्डी हँसली (Collar bone) या अक्षक कहलाती है। इसके कुछ नीचे हटकर स्तन (Mamma) है। स्तनकी घुण्डीको स्तन-वृन्त (Nipple) या चुचुक कहते हैं। छाती या वक्षके बीचवाली हड्डीको वक्षोस्थि (Sternum) कहते हैं। वक्षोस्थिके दोनों ओर पसलियाँ (Ribs) रहती हैं। इसके बाद सामनेकी ओर उदरका अंश है। वक्ष और उदरके बीचमें एक पेशी रहती है। इसको वक्षोदर-मध्यस्थ-पेशी (Diaphragm) कहते हैं। दोनों ओरको पसलियोंका मध्य भाग कौडी (Epigastrium) कहलाता है। उदरके बीचमें जो गड्ढा सा स्थान है, उसे नाभी (Navel) कहते हैं। नाभीसे सामनेकी

ओर, कुछ आगे बढकर जननेन्द्रियो का ऊपरवाला जोड है। इसके पीछे का भाग मूत्राशय (Urinary bladder) कहलाता है। उदरके निचले भागमें पुरुषो का लिङ्ग (Penis) और लिङ्गकी जडसे लटकती हुई जो एक थैली-सी रहती है, उसे अण्डकोष (Testicles) कहते हैं। स्त्रियो के इस स्थानपर योनिद्वार (Vulva) रहता है। उदरके भीतरी भागमें आमाशय, प्लीहा, यकृत, पित्ताशय आदि यन्त्र रहते हैं।

अब वक्षस्थलके पिछले भागको देखिये। इस पिछले भागका नाम पीठ (Back) है। ऊपरवाला भाग खर्वा कहलाता है। बीचोबीच जो हड्डियोंकी लडी है, वह मेरु दण्ड या रीढ (Spinal Column) कहलाता है। इसके बीचमें एक स्थान ठीक नाभीके पीछे है, जो कमर कहलाता है। इसके बाद एक दरार सी है। जिसके दोनी तरफ थुलथुले दो स्थान हैं, जिनको चूतड कहते हैं (Fold of nates)। दोनों चूतडोंके बीचमें एक छेद रहता है जो मलद्वार (Anus) कहलाता है।

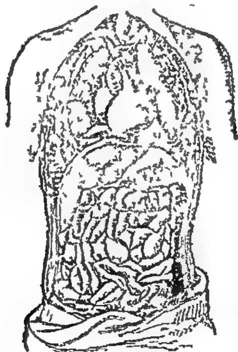
वक्षके दोनों ओर जो दो भुजाएँ लटकती रहती हैं, उन्हें ऊर्ध्व शाखाएँ कहते हैं। ये दो हैं। दाहिनी और बाई। गर्दनके पास जो एक उभरा हुआ भाग रहता है, उसे कन्धा या स्कन्ध (Shoulder) कहते हैं। उसके नीचे बाँह या बाहु (Arms) है। कन्धा और बाहुके बीचका गड्ढा बगल (Axilla) कहलाता है। बाहुके बीचका

भाग केहुनी (Elbow) और केहुनी तथा कलाईके बीच का भाग प्रकोष्ठ या अग्रबाहु (Fore-arm) कहलाता है। इसके बाद पंजेके ऊपरका अग्र कलाई (Wrist) कहलाता है। कलाईके बाद हाथ या हस्त (hand) है। हाथ के सामनेकी ओर जो भाग है, उसे हस्ततल, करतल या हथेली (Palm) कहते हैं और पिछले भागको करभ (Dorsum of hand) कहते हैं। इसके बाद पाँच अंगुलियाँ (Fingers) होती हैं। इनमें सबसे मोटीको अंगूठा (Thumb), उसके बाद वालीको तर्जनी (Index finger), तर्जनीके बादवाली लम्बी अंगुलीको मध्यमा (Middle finger), मध्यमाके बाद उससे जो छोटी होती है, उसे अनामिका (Ring finger) और सबसे छोटीको कनिष्ठिका (Little finger) कहते हैं। अंगुठेमें दो और अंगुलियों में जो तीन तीन अंश होते हैं, उन्हें पोवे या पर्व (Phalanx) कहते हैं। और अंगुलीके सिरेपर जो सफेद भाग रहता है, उसे नाखून (Nail) कहते हैं।

धडके नीचे जो दो लम्बे पैरके भाग हैं उन्हें निम्न शाखा कहते हैं। इनमें सामनेकी ओर घुटनेके ऊपरवाले भागको उरु (Thigh) कहते हैं। जाँघ और जननेन्द्रियके बीचका भाग वंक्षण (Groin), चूतडोंके पासवाला और जाँघका भाग कूल्हा (Hip) कहलाता है। जाँघके नीचे पैर (foot) होते हैं। पैर जिस जगहसे मुडता है वह टखना है। टखनेके दोनों ओर वाले उभारको गुल्फ

(Ankle) और गुल्फके पीछे जरा नीचे एँडी (Heel) रहती है। पैरके नीचेका गढा तलवा (Sole) कहलाता है। इसके बाद पैरकी अंगुलियाँ होती हैं।

कड़े और नर्म अर्थात कठिन और कोमल पदार्थोंके संयोगसे यह मनुष्यकी देह बनी है। इनमें अस्थि (हड्डियाँ) और उपास्थि (चबनी या मुरमुरी हड्डी) कड़ी हैं। खून मांस, मेद, मज्जा और भीतरी यन्त्र आदि कोमल हैं। ये कोमल उपादान अस्थि और उपास्थिके सहारे और आधारपर रहते हैं।



देखिये।—वक्षोदर मध्यस्थ पेशी वक्ष-गह्वरसे उदरको अलग कर रही है। ऊपर मध्यमें फेफड़ेके भीतर हृत्पिण्ड है, दोनों ओर फेफड़े हैं, नीचे बाईं ओर उदर है और दाहिनी ओर यकृत। उदरके भीतर प्लीहा छिपी हुई है।

मस्तिष्क, हृत्पिण्ड, पाकाशय, यकृत, प्लीहा वगैरह कोमल चीजें सब हड्डीके गढ़हेमें सुरक्षित भावसे हैं। यह अस्थि-कोटर (हड्डीकी कोठरी) मांस या मांस-पेशीसे ढकी रहती है। यह मांसपेशी भी चर्मके दो पर्दों से ढकी रहती है।

सर, धड़ और हाथ-पैरों के हाड़से ही यह नर कंकाल (ठठरी) बनी है। ये हड्डियां इस ढंगसे अपने अपने स्थानपर हैं कि हट नहीं सकती। ये इसी भावसे सजाई गई है और ऐसे ही कौशलसे बनी है। इसपर भी ये एक प्रकारकी बन्धनी (Ligaments) से कसकर बँधी हुई है। कंकाल रहनेके कारण ही हमलोग तनकर खड़े हो सकते हैं या चल सकते हैं। यह कंकाल चमड़े और मांससे ढका रहता है, इसीलिये दिखाई नहीं देता। फूस का मकान या कोई प्रतिमा तैयार करनेके लिये जिस तरह पहले ढाँचा तैयार करना पड़ता है, इसके बाद उसपर मिट्टी का लेप चढ़ाया जाता है, यह कंकाल भी उसी तरह हमारे शरीरके ढाँचाकी तरह है।

रक्त (खून), रक्तवहानाड़ी (खून जिन नाड़ियों से शरीरमें फैलता है), हड्डियाँ, मुरमुरी हड्डियाँ (उपास्थि), मज्जा, मांस या मांसपेशियां, मेद, त्वचा, लोमकूप (रोंओंके छिद्र) ग्रन्थि (गांठें) तन्तु, केश, नख वगैरहके द्वारा ही हमारा यह शरीर बना है। इसलिये, पहले इनकी ही व्याख्या संक्षेपमें की जाती है।

रक्त (Blood)।—यह खून एक तरहका पतला पदार्थ है। यह पानीसे कुछ गाढा रहता है। इसका रंग चमकीला लाल रहता है (Bright scarlet)। असलमें तो खून पानीकी तरह ही बिना किसी रंगका अर्थात् वर्णहीन होता है। पर इसमें लाल रंगकी कणिकाएँ तैरती रहती है, इसीलिये यह लाल दिखाई देता है। रक्तमें इन लाल कणोंके अलावा सफेद कण भी मौजूद रहते हे। पर लाल कणोंकी ही संख्या अधिक हे। इन रक्तके कणोंको कोषाणु (Corpuscles) कहते हैं।

इससे यह मालूम होता है कि रक्तमें तीन तरहकी चीजें मौजूद है। जैसे (१) बिना रङ्गका एक पतला पदार्थ अर्थात तरलाशय (Liquor Sanguinis), (२) लाल कोषाणु (Red corpuscles), (३) सफेद या बिना रङ्ग वाले कोषाणु (White corpuscles)।

रक्तमें बहुत तरहकी चीजे मिलती है, इसमें लोहेका भाग अधिक है। खून शरीरके सब भागो में हमेशा चक्कर लगाया करता है।

रक्तकी गन्ध।—(Odor) मनुष्य और दूसरे दूसरे जन्तुओंके रक्तकी गन्धमें बहुत प्रभेद है। उड़ारी वसा मिले अम्ल (Volatyle fatty acid) की मात्राके अनुसार यह प्रभेद रहता है।

स्वाद (Taste)।—कुछ नमकीन रहता है।

आपेक्षिक गुरुत्व ।—१०५५ से १०६० ।

परिमाण ।—देहका परिमाण हमारे देशमें बहुत कम है । वजनका बारहवा भाग खून रहता है ।

चौथाई ¼ हृत्पिण्डमें—फिफडेकी बडी धमनी और शिरामें । चौथाई ¼ यकृतमें । ¼ चौथाई हड्डी और पेशी मण्डलमें और बाकी शरीरमें चौथाई खूनका स्राव होता है और इसी वजहसे यह निकल भी जाये तो आदमी जीवित रहता है ।

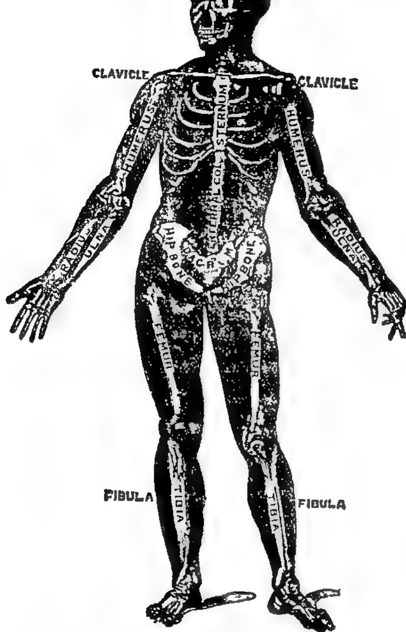
खूनका ताप ।—(Temperature) लगभग १०० ।

रक्तवहा नाड़ी (Blood vessels) ।—हृत्पिण्डसे कितने ही तरहके नल या नाडियाँ निकलती हैं । इनकी द्वारा ही हृत्पिण्डसे शरीरके सब भागोंमें खूनका दौरान हुआ करता है । इसी वजहसे इन्हें "रक्तवहा नाडी" (Blood vessels) कहते हैं । इन रक्त ले जानेवाली नाडियोंमें कितनी को "धमनी", कुछको "शिरा" और कितनों ही को "कैशिक नाडियाँ" कहते हैं । जिस नलोमें लाल खून रहता है उसको **धमनी** (Artery) कहते हैं । ar शब्दसे हवा, tere शब्दसे धारण करना—अर्थात (Air containing) नलीको (Artery) कहते हैं । जिस नलीमें बैंगनी या कालिमा लिये रक्त रहता है, उसको **शिरा** (Vein) और केशकी तरह जो बहुत पतली पतली नसें रहती हैं और जिनसे

धमनी या शिराओंका आपसमें संयोग हो जाता है, उनको केशिका नाड़ी (Capillaries) कहते हैं।

स्नायु (Nerve)।—मस्तिष्क और मेरुमज्जाकी जड़से "स्नायु सूत्र" (Nerves) बाहर निकलकर शरीरके सब स्थानोंमें फैले हुए हैं। ये स्नायु मण्डल सारे शरीरमें फैल कर आपसमें सम्बन्ध बनाये हुए हैं। यद्यपि ये बहुतसे मालूम होते हैं, पर वास्तवमें एक हैं। ये स्नायु देखनेमें पतले सफेद सूतकी तरह हैं पर ये हैं एक तरहके तेलहि पदार्थ-भरे खोखले नल। इन स्नायुओंकी संख्या इतनी अधिक है कि गिनती नहीं हो सकती। शरीरके किसी किसी जगहके स्नायु इतने सूक्ष्म हैं कि अनुवीक्षण यन्त्रका सहारा लिये बिना दिखाई नहीं दे सकते। स्नायु-तन्तुके स्नायुका परिमाण एक इञ्चका १/४००० (चार हजार भागका एक भाग) मात्र है। मस्तिष्क और स्नायु एक ही उपादानसे बने हैं।

हड्डी मानव शरीरका सबसे कड़ा उपादान है। ये हड्डियां जान्तव, यान्त्रिक (Animal organic) और खनिज (Mineral) पदार्थोंकी मिलावटसे बनी हैं। जान्तव पदार्थोंमें शीरिस और खनिजमें चूना वगैरह (Phosphates of calcium) इनके प्रधान उपादान हैं। खनिज पदार्थोंसे हड्डीका कड़ापन तैयार होता है। यदि ऐसिड देकर यह किसी तरह निकाल दिया जाये तो हड्डीको इतना नर्म बना दिया जा सकता है कि उससे बन्धनके सूतकी तरह गांठ दी जा सकती है। बचपनसे हड्डीमें खनिज पदार्थ



कंकाल—इसमें प्रधान प्रधान हड्डियाँ दिखाई गई गयी है।

(१) खोपड़ी (skull) (२) वक्षोस्थि (sternum) (३) अक्षकास्थि (clavicle) (४) प्रगण्डास्थि (humerus) (५) बहि: प्रकोष्ठास्थि (radius ulna)। (६) कशेरुका अस्थियाँ—(vertebral column) (७) कूल्हेकी हड्डी (hip bone) (८) ऊर्वस्थि (femur) (९) जंघा-स्थि) tibia) (१) अनुजंघास्थि (fibula)।

(Flat-bones) या समतल हड्डियाँ हैं, जिनके ऊपर और नीचे दो कड़े हड्डीके स्तर हैं, इन स्तरोंमें एक तरहकी स्पंजकी तरह कोमल और स्थिति-स्थापक गुणवाली हड्डी दिखाई देती है। जैसे, पंजरेकी हड्डी। इसके अलावा और भी कितनी ही हड्डिया हैं, उनका आकार प्रकार कितने ही ढंगोंसे बना है और वे शरीरके कितने ही स्थानोंमें लगी हैं। इनको असम (टेढ़ी-मेढ़ी) अस्थि (Irregular) कहते हैं—जैसे मेरुदण्ड (पीठकी रीढ़की हड्डी)।

उपास्थि ।—(cartilage) शरीरमें लगभग हड्डी ही की तरह (उप+अस्थि) हड्डीकी पहली अवस्थाकी उपास्थि कहा जाता है। इसे कोई कोई नई हड्डी भी कहते हैं। उम्र बढ़नेके साथ ही साथ कितनी ही इसी तरहकी हड्डियाँ बढ़ कर और फैलकर हड्डी बन जाती है। परन्तु जो उपास्थियाँ किसी अस्थिके सन्धि-स्थानपर हैं, वे कभी अस्थि नहीं बनती। उपास्थियाँ हड्डीकी तरह टूट जानेवाली या कड़ी नहीं होती। इनमें बहुत कुछ कोमलता और बहुत कुछ कड़ापन मिला रहता है। इनमें स्थिति-स्थापक गुण बहुत अधिक है, ये भी कितनी ही तरहकी होती है। उपास्थियाँ सफेद, पीली और सफेद आभा लिये पीले रंगकी होती हैं।

ये उपास्थियाँ भ्रूणके शरीरमें हड्डीकी तरह काम करती है। उपास्थियाँ पेशी और बन्धनी सबको ठीक अपनी जगहपर रखती हैं। हड्डियोंको आपसमें मिलाये रहती हैं और उनके

हिलने डोलनेमें विशेष सहायता पहुँचाती है। हड्डियोंकी रक्षामें भी ये उपास्थियां विशेष सहायता पहुँचाती हैं।

अस्थि-सन्धियां (Joints)।—बैठ जानेपर खड़े होना, खड़े रहनेकी अवस्थासे बैठना अथवा बहुत दूरतक चलना-फिरना, जाना आना, बोझ भारी चीज़ उठाना वगैरह कामोंमें सुविधाके लिये सृष्टिकर्त्ताने शरीरमें जगह जगहपर बहुतसी सन्धियां (joints) बना दी हैं। अस्थि सन्धियोंसे दोनों हड्डियां और पञ्जरे आदि मिले रहते हैं। मकानके किवाड़ोंमें जिस तरह कब्ज़ा रहता है, उसी तरहसे इस शरीर रूपमें ये सन्धियां हैं। ये तीन भागोंमें विभक्त हैं—(१) अचल, सचल और आंशिक सचल सन्धि। कामके अनुसार ही इनके ये नाम पड़े हैं।

मज्जा (Marrow of the bone)।—लम्बे आकारवाली हड्डियां और उपास्थिके बीचकी सार वस्तुको "मज्जा" कहते हैं। बच्चोंकी अस्थि-मज्जा लसदार स्वच्छ और पानीकी तरह पतले पदार्थ जैसी रहती है। इनमें पहले चर्बीका लेश भी नहीं रहता। जवान मनुष्योंकी अस्थि-मज्जा पीली आभा लिये, गाढ़ी और चर्बी-मिली होती है।

मांस या पेशी।—ये जिन और जैसे तन्तुओंसे बनी हुई या उत्पन्न हैं, उनसे साफ मालूम होता है, कि वे एक ही पदार्थ हैं। मांसपेशी या तो कुछ मांसों का गुच्छा है या एक एक मांस सूत्र है। सारे शरीरका जो वजन होता है,

उसकी आधी मासपेशी होती है (Muscles make up about one half of total body weight)। किसी प्रतिमाका ढाचा जिस तरह मिट्टीसे लेपा हुआ रहता है, मनुष्यका कंकाल भी उसी तरह मास और पेशियों द्वारा ढका रहता है। इन पेशियोंकी सख्या लगभग पाँच सौ है। इनका गुण यह है, कि ये स्थिति स्थापक है और इन्हें सहजमे टेढा-मेढा और संकुचित किया जा सकता है। ये मासपेशियाँ कितने ही सूत जैसे मासोंकी मिलावट मात्र है। इनका कुछ अंश स्वच्छ है, पर इनमें खून लगा रहता है। इस वास्ते ये लाल दिखाई देती हैं। इनका बीचका भाग पतला रहता है, परन्तु दोनो सिरे नुकीले पतले रहते हैं। पेशियोंमें सैंकडे ७५ भाग (75 parts of water) परिमाण में पानी रहता है।

जिस मास पेशीका एक सिरा दो मुँहवाला होता है। वह मास पेशी **द्विमूल मांसपेशी** (Biceps muscle) कहलाती है। द्विमूल मासपेशीका दोनो मुँह बन्धनी दोनो (Ligaments) द्वारा हड्डीके साथ मिला रहता है।

जिस मांसपेशीका एक शिरा तीन मुँहवाला होता है उस मासपेशीका नाम "त्रिशिरा मासपेशी" (Triceps muscles) है। मासपेशी सूतकी तरह महीन होती है, पर मजबूत पदार्थसे हड्डीके साथ मिली रहती है। इस पदार्थको बन्धनी (Tendons या sinews) कहते हैं। जिस तरह कंकाल न रहनेपर हमलोग सीधे खडे नही हो सकते

या अङ्ग प्रत्यङ्गको घुमा फिरा नहीं सकते अथवा अङ्गोंको हिला नही सकते। उसी तरह मासपेशी न रहनेपर, उठना, बैठना, हँसना, बोलना अथवा जरा भी हिलना डोलना—कोई भी काम नही कर सकते।

पेशियो को कई भागोंमे विभक्त किया जा सकता है। प्रथम या चिकनी और स्वच्छ, हमारी इच्छानुसार काम करनेवाली या ऐच्छिक पेशी (Voluntary muscles) और दूसरी धारीदार (striped), स्वत प्रवर्त्तित या अनैच्छिक (Involuntary) पेशी। (अपनी इच्छानुसार काम करने वाली)।

पहली प्रकारकी पेशी हमारी इच्छाके अनुसार काम करती है। जैसे पैरकी, एँडीकी, गर्दनकी, मुँहकी इत्यादि।

इच्छा करते ही पैरको एँडीकी पेशी हिलायी जा सकती है। गर्दनकी पेशीसे माथा सीधा रखा जा सकता है। मुँहकी पेशीसे चबाया जा सकता है या जबडे हिलाये जा सकते है। इसके अलावा इन्हे दो भागो में बाँटा जा सकता हैं। संकोचनी (Flex) पेशी और प्रसारणी (Extensor) फैलानेवाली पेशी द्वारा हाथ आदि सिकोडे और फैलाये जा सकते है।

दूसरे प्रकारकी पेशी प्रवर्त्तित पेशी हैं। यह हमारी इच्छाके अधीन नहीं है, बल्कि अनैच्छिक पेशी

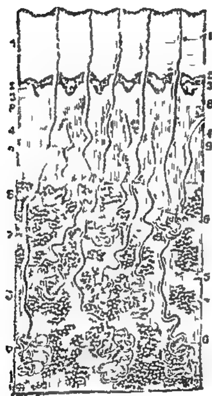
(Involuntary) है। पाकस्थलीकी, आँतोंकी, फेफड़े और हृदयकी पेशियाँ इसी ढंगकी हैं। इनका काम हमेशा चला करता है अर्थात साँस लेने और छोड़नेमें, खूनकी दौरानमें, पाचन क्रिया और प्रसव-क्रिया आदि में।

मेद और चर्बी (Fat)।—यह एक तरहकी सादी तेलही चीज है। देखनेमें यह घीकी तरह है। यह मास पेशियों के ऊपर, चर्मके ऊपर और चमड़ेके नीचे रहती है। इस चर्बीकी वजहसे मासपेशिया आपसमें अलग अलग रहती है। चर्बीका काम है, शरीरको गर्म रखना। इसकी वजहसे ही शरीरकी गर्मी सुरक्षित रहती है। त्वचाके नीचे रहनेवाले मेदकोष (जिनमें मेद रहता है) की अवस्थितिके तारतम्यके अनुसार शरीरकी गर्मी कम या अधिक हुआ करती है या मालूम होती है। जब शरीरमें मेद बढ़ जाता है तो लोग मोटे होने लगते है।

त्वचा।—त्वचा हमारे शरीरका एक तरहका बाहरी ढकना—आवरण (external covering) है। इससे स्नायु-सूत्रकी (nerve-fiber—reflexor) प्रतिक्षिप्त क्रिया और ताप आदि बना रहता है। इसके द्वारा हममे स्पर्श ज्ञान पैदा होता है। ये दो भागो मे विभक्त है —(१) वहिस्त्वक् (epidermis—उपचर्म) (२) "अन्तस्त्वक् (dermis or true skin—भीतरी त्वचा, चर्म)। शरीरके ऊपरी भागमे जो त्वचा रहती है, उसे वहिस्त्वक् (उपचर्म) कहते हैं। यह

सांपकी केंचुलकी तरह सूक्ष्म रहती है। इसका दूसरा नाम "नकली त्वचा" (false skin) है। इसमें स्नायु या रक्तवहा

चित्र नं० २



(१) अन्तस्त्वक (चर्म dermis or true skin)।

(९) वर्णकोष (colour cells)।

(६) पसीनेवाली ग्रन्थियां (sweat glands)।

(०) मेद या चर्बी (fat)।

नाड़ी नहीं रहती। इसीलिये इसमें सुई चुभानेसे दर्द नहीं होता या उससे खून नहीं निकलता। नहाने या बदन

मलनेके समय यह त्वचा निकल जाती है और इस स्थान पर नया वहिस्त्वक् आप ही पैदा हो जाता है। इसीलिये, हमलोगों के वास्ते त्वचाको हमेशा साफ रखना लाभदायक है।

भीतरी त्वचाका नाम "अन्तस्त्वक्" या असली त्वचा है। यह मास-पेशी या चर्बीके ऊपर ही रहता है। इसमें स्नायु या रक्तवहा नाली मौजूद रहती है। इसमें सुई या काँटा गडानेसे हमें दर्द होता है और उससे खून निकलता है। प्रकृत त्वचामें ठीक ऊपर और नकली त्वचामें ठीक नीचे, एक जालकी तरह "कोष (cells)" से भरा हुआ स्तर है। उसका नाम "मूल झिल्ली" (Basement membranes) है। इन कोषोंमें ऐसे उपादान है, जिनसे शरीर के रग या रूपमे विभिन्नता रहती है। जैसे, चीनाका रंग पीला, अगरेजोंका रग सफेद, काफ्रियोंका रग काला इत्यादि। (The pigment of the skin is continued in the deepest layer of the epidermis)। इसी झिल्लीका दूसरा नाम "वर्णकोष" (colour cells) है। जल-वायु, धूप लगना वगैरह कितने ही कारणोंसे वर्णकोषमे बहुत तरहके रग पैदा हुआ करते है। इन वर्णकोषोंकी सतह उडा देनेपर, मानव-शरीर सफेद दिखाई देता है।

लोमकूप (Pores of the skin)।—त्वचा केवल शरीरका आवरण ही नहीं है बल्कि रक्तसे दूषित पदार्थ बाहर निकाल देनेवाला एक विशेष यन्त्र भी है। इस त्वचा

में असंख्य छोटे छोटे छेद हैं। इन छेदोंको लोमकूप (Pores of the skin) कहते हैं। ये लोमकूप हमारे शरीरके छोटे नल या नालीकी तरह हैं। हमारे शरीरके कितने ही दूषित पदार्थ इनके भीतरसे पसीनेके रूपमें निकला करते हैं। गर्मी, जाड़ा और विजातीय पदार्थ (Foreign body) से हमारी रक्षा करते हैं।

कपड़े, पोषाक, बिछावनकी चादर वगैरह हमेशा साफ रखना बहुत जरूरी है, क्योंकि लोमकूपकी राहसे जो दूषित पदार्थ शरीरसे बाहर निकलते हैं, उनसे पहननेके कपड़े, बिछावनकी चादर, तकियेकी खोल, झालर, गिलाफ, गद्दी वगैरहमें लगे रह जाते हैं। इस तरहके दूषित पदार्थ लगे वस्त्र, कपड़े, मोजे वगैरह पहननेसे और मैले बिछावन पर सोनेसे ये दूषित पदार्थ सब त्वचामें फिर प्रवेश कर जाते हैं। उससे बहुत तेज़ बीमारी पैदा हो जानेकी सम्भावना रहती है। रोज निर्मल पानीमें नहानेसे अथवा शरीर मलनेसे रोम-कूपोंका मुँह साफ रहता है और ये दूषित पदार्थ सरलतासे बाहर निकल जाते हैं।

ग्रन्थियाँ (गाठे -Glands)।—जो सब शारीरिक यन्त्र रक्त आदिसे किसी पदार्थको बाहर निकाल सकते हैं या संकुचन कर सकते हैं, उन्हें "ग्रन्थि—गाठ" (Gland) कहते हैं। शरीरके सभी स्थानों में गाठे मौजूद हैं —जैसे पसीना निकालनेवाली नाली (स्वेद ग्रन्थि)। (Sweat

gland is distributed thickly over the whole surface of the body)।

तन्तु (Tissue)।—यह डोरीकी तरह एक खास तरह की बन्धनी है। इन सबके द्वारा शरीरके यन्त्र सब अपने अपने स्थानपर आबद्ध रहते हैं। ये जब हड्डीके साथ हड्डीको मिलाये रहते हैं, उस समय इन्हें अस्थि-बन्धनी (ligament) कहते हैं और मासके साथ हड्डीको मिलावट करनेपर इन्हें "पेशी बन्धनी" (Tendons) कहते हैं।

इनका एक नाम और भी है —कण्डरा (Tendons) ये सूतकी तरह स्वच्छ, पर दृढ होती है। इस मास पेशीके कितने ही अन्तिम भागके साथ अस्थिका बन्धन रहता है, इसलिये उसका दूसरा नाम **"अस्थि-बन्धनी"** है। यह लचीली, पतली और मजबूत होती है।

केश या लोम (रोआँ-hair)।—महीन सूतकी तरह जो पदार्थ, बाहरी त्वचापर दिखाई देते हैं, उन्हें रोआँ कहते है।

Hair, a modification of Epidermis—See Physiology page 125 (American)

तलहत्थी, तलवा और कपालको छोडकर शरीरके प्राय सभी अङ्गो में रोएं रहते है पर माथेमें केश बहुत है। दाढी मूँछ और माथेके रोओंको केश कहते है। प्रत्येक केशके बढनेकी एक एक सीमा है। जब कोई केश अपनी सीमा

तक बढ जाता है तो वह झड जाता है और उसकी जगह पर दूसरा केश पैदा हो जाता है।

जडकी ओरसे केश बढा करते हैं। सिरेकी ओरसे नहीं बढते। इसलिये, केश कटवा डालनेपर पुराने केश ही काटे जाते हैं। केशोंमें स्नायु नहीं है। इसीलिये, उन्हें काटनेपर हमलोगोंको कोई तकलीफ नहीं होती।

केशोंको हमेशा साफ सुथरे रखना चाहिये। केश यदि लम्बे और घने रहते हो तो गर्म पानीमें (Bi carbonate of soda) मिलाकर, उससे केश धोना और कंघीसे झाडना चाहिये।

केशोंसे लाभ या उनकी प्रक्रिया (fuuction) क्या है? गर्मी सर्दी प्रभृति विजातीय पदार्थों से रक्षा करना (to protect from heat and cold)।

नख (Nails)।—इनसे अङ्गोंकी रक्षा होती है — स्पर्श शक्तिमें सहायता मिलती है (to assist in delicacy of touch)। अंगुलियोंके सिरेपर ही नख होते हैं। ये नख रोयें की तरह बाहरी त्वचाके रूपान्तर भर हैं। केशों की तरह नख भी जडकी ओरसे ही बढते हैं और इनमें भी स्नायु न रहनेके कारण हमलोगोंको कटवानेमें कोई तकलीफ नहीं होती। नखके तीन अंग होते हैं —(१) मूल (२) देह (३) नखाग्र अर्थात नखका अगला भाग। नखके सिरेकी ओरका जो भाग हमलोग कटवा डालते हैं, वही नखाग्र "(free edge)" है, मांसके ऊपर नखका

जो अंश रहता है, वही "देह" (body) है और त्वचाके निचले अंशमें उसकी जड रहती है (root)।

मानव-देह।

(१) मुण्ड (२) मध्य शरीर या धड और (३) ऊर्द्धांश या हाथ, इस तरह तीन भागोंमे मानव देहको विभक्त किया जा सकता है।

नरकंकाल (Skeleton)।

मुण्ड, देहकाण्ड (धड), ऊर्द्ध-शाखा और निम्न-शाखा इन चार अंशोंकी हड्डीसे समस्त शरीरका नर-कंकाल बना है। समस्त शरीरका भार वहन करना या उस भार को सहना और देहके भीतरवाले सब यन्त्रोंकी रक्षा करना तथा शरीरका सुचालन करना—यह सब नर कंकालकी सहायतासे ही होता है। इनकी सहायतासे ही मनुष्य सरल भावसे या सीधा होकर खडा हो सकता है। मस्तिष्क की रक्षा करनेके लिये कितनी ही ऐसी हड्डियाँ बनी है, जो एक गोलाकार बक्स जैसी होकर मस्तिष्कको रक्षा करती है। फेफडे या हृद्पिण्ड आदिकी रक्षा करनेके लिये, डलियोके आकारका एक यन्त्र बना है। इनके अलावा, स्त्रियोंके जरायु और डिम्बकोष आदिकी रक्षाके लिये वस्ति-गह्वर (pelvis) है—उसके भी चारो ओर प्राय. हड्डियां ही हैं।

इसके बाद हाथ पैरोंके सञ्चालनके लिये, उन्हें सिकोड़ने के लिये, फैलानेके लिये, खड़े होने और दौड़नेके लिये, जैसे कल कब्जोंकी जरूरत रहती है, वैसे ही अस्थियोंका निर्माणकर सृष्टिकर्त्ताने इस यन्त्रको बनाया है। प्रतिमा को ढँकनेके लिये जिस तरह घास, डोरी, मिट्टी आदिका प्रयोग किया जाता है, उसी तरह मांस और चर्म्म आदिसे ढँककर मनुष्य मूर्त्तिकी सृष्टि हुई है। नीचे क्रमश हड्डियों का वर्णन दिया जाता है।

मुण्ड।

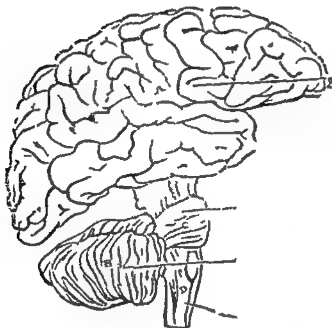
शरीरके प्रधान अ शोंमें यह मुण्ड अन्यतम है। (१) मस्तिष्क (२) मुखमण्डल (अर्थात आंख, कान, नाक और मुख गह्वर—मुखके भीतरका गढहा) ये मुण्डके अन्तर्गत हैं।

(१) मस्तिष्क। (Brain)

बुद्धि और ज्ञानका आधार मस्तिष्क ही है। इसीलिये शरीरमें मस्तिष्कको ही श्रेष्ठ कहा जा सकता है। मस्तिष्क के प्रभावसे ही मनुष्य और और प्राणियोंकी अपेक्षा उन्नत है। हमारे इस शरीरमें मस्तिष्क सबसे अधिक कोमल पदार्थ है। जन्मके समय इसका एक तिहाई ⅓ अंश रहता है। इसीलिये यह इतने यत्नसे सुरक्षित रहता है (देखिये ४ न० चित्र) कि इसपर लगातार एक पर एक तीन चमड़ेका स्तर रहता है। नर कंकालकी हड्डियोंकी संख्या—समूचे शरीरकी २४८

है—इनमें दांत भी हैं। जीवनकी सभी अवस्थाओंमें हड्डियोंकी संख्या एक तरहकी नहीं रहती। बुढ़ापा आने पर इनकी संख्या क्रमशः घट जाती है।

(चित्र न० ४)



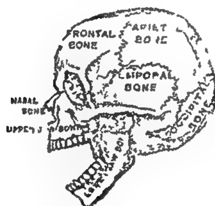
(ऊपरसे नीचेकी ओर वृहद् मस्तिष्क, लघु मस्तिष्क, सेतु, सुषुम्नाका एक पार्श्व दिखाई देता है ।)

मेरुदण्डमें सबसे पहले ३३ अस्थियां अलग अलग रहती हैं। इनके ऊपरकी २४ हमेशा पृथक भावसे रहती हैं। बाकी ९ में भी पहली ५ एक साथ मिलकर एक हो जाती हैं। पूर्ण वयस्क देहमें दण्ड वगैरह कितनी ही छोटी हड्डियोंको यदि छोड़ दिया जाये तो सब मिलाकर २०० हड्डियां दिखाई देती हैं। पीठमें २६ हड्डियां,

करोटीमें ८, मुखमण्डलमें ४, छातीके पञ्जरकी हड्डियाँ २६, ऊर्द्ध शाखा दोनोंमें ६४, निम्नाङ्गमें ६२ इस तरह कुल २०० अस्थियाँ होती हैं। मस्तिष्क आठ कड़ी हड्डियोंसे बनी एक खोलमें बन्द रहता है। इस खोलका ऊपरी भाग भी चर्म और केशोंसे ढका रहता है (५ न० चित्र देखो)।

नीचे लिखी आठ हड्डियोंसे मस्तिष्कका खोल बनता है —

(चित्र न० ५)



(१) सम्मुख कपालास्थि (Frontal bones)
(२) और (३) पार्श्व कपालास्थि दोनों (Parietal bones)
(४) पश्चात मस्तकास्थि (Occipital bone)
(५) और (६) दोनों शङ्खास्थियाँ (Temporal bones)
(७) कीलकास्थि या जतुकास्थि (Sphenoid bone)
(८) झांझिरास्थि (झर्झरास्थि) (Ethmoid bone)

इन हड्डियों में (१) Frontal bone सम्मुख कपालास्थि, माथेका सामनेवाला भाग और कुछ कुछ माथेकी हड्डी

कम रौशनोमें लिखना पढना या सिलाई करना अथवा आखको तकलीफ देनेवाला कोई काम करना उचित नही है। ज्यादा रौशनी रहनेपर भी इसी तरह हानि होती है। रेलमें, गाडीमें अथवा सोये सोये पढना भी नुक्सान करता है। बीच बीचमें विश्राम लेना आवश्यक है। पेड-पत्तेकी ओर, खासकर हरी चीजकी ओर देखनेसे आखको अधिक आराम मिलता है। आख खराब न हो तो केवल शौकीनोके लिये चश्माका व्यवहार बहुत हानि पहुंचाता है। सूर्य या किसी चमकीली रौशनीकी ओर देखना भी आखोके लिये बहुत नुक्सान देनेवाला है।

(ख) कान।—आंखकी तरह कान भी दो होते है। खोपडीकी जडमे दाहिने ओर बाएं, एक एक रहते है।

वर्णनकी सुविधाके लिये कानको तीन भागोमें विभक्त किया गया है, जैसे —(१) बाह्य कर्ण, (२) मध्य कर्ण और (३) अन्त कर्ण। (१) बाहरी कानका आकार सीप या चम्मचकी तरह होता है। इसके दो अंश होते है- "कर्णपुट और कर्ण-कुहर।" कर्णपुटसे शब्दोका संग्रह होता है और वह शब्द कर्ण-कुहरमें प्रवेश करता है। कोई कोई कर्ण कुहरको श्रवण नाली (auditary canal) भी कहते हे। यह कर्ण-कुहर भीतरकी ओर धीरे धीरे पतला और संकीर्ण होकर टेढा हो, एक पतली झिल्लीसे मिल गया है। इसी चमडेकी झिल्लीका नाम "कर्ण-पटह" (Tympanic membrane) है।

श्रवण नालीके गात्रमें खूब सूक्ष्म सूक्ष्म रोएँ रहनेके कारण, उसमें कोई चीज सहजमें घुस नहीं सकती। श्रवण-नालीके गात्रमें कितने ही कर्ण-मल-स्रावी (कानका मैल निकालनेवाली) ग्रन्थियाँ हैं। उन्हें (wax gland) कहते हैं। इन सब ग्रन्थियोंसे कानका मैल निकलकर श्रवण नालीके भीतरी भागको तर रखता है।

कण्ठकर्णी नाली (Eustachian tube) की क्रिया द्वारा कर्ण गह्वर या कर्ण कुहरकी भीतरी और बाहरी भागमें, दबावकी समता ठीक ठीक बनी रहती है।

(२) पटहसे लेकर भीतरी कान तकके अंशको "मध्य कर्ण" कहते हैं। इस मध्य कर्णको सुरंग हवासे भरी रहती है। मध्य कर्णमें तीन छोटी हड्डियां आपसमें शृंख की तरह मिली हैं। यह भी देखनेमें हथौड़ी (hammer) की तरह, दूसरी निहाई (anvil) की तरह और तीसरी देखनेमें घोड़ेकी रिकाब (stirrup) की तरह होती है। यह तीसरी हड्डी और भी एक पटहसे मिली रहती है। मध्य कर्णके बाद (३) अन्त कर्ण रहता है। इसकी रचना प्रणाली इतनी जटिल और इतनी विचित्र है कि उसका पूरा पूरा वर्णन इस छोटीसी पुस्तकमें असम्भव है। यह पानीकी तरह एक पदार्थसे भरा रहता है। श्रवण स्नायु मस्तिष्कसे निकलनेके बाद, इसमें प्रवेशकर हजारों भागमें बट गया है और इसके सभी अंशोंमें उसने अपनी शाखा-प्रशाखाका विस्तार कर दिया है। अन्तःकरणका पहला छोर

देखनेमें बहुत कुछ अंगूठेकी तरह है। बीचका अंश प्रगड़ेकी तरह है और अन्तका हिस्सा घोंघेकी तरह है। (८ नं० चित्र)।

श्रवणेन्द्रिय या श्रवण-यन्त्रोंकी क्रिया प्रणाली

(Function of the auditory apparatus)

वाह्य कर्ण।—बाहरी कान केवल समाचार संग्रह कर उसे कर्ण पटह तक ले जाता है और पटहके स्पन्दन (vibrations) द्वारा शब्दकी प्रखरताको बढ़ा देता है।

टेन्सर और लेवेटर (प्रसारक और उत्थापिका) पेशीका कार्य।—शब्दोंको ठीक ठीक नियोजित करना (To accomodate the membrane to vibration)।

कर्णास्थि।—(Bones) की क्रिया इन कम्पनोंको हड्डीके भीतरसे ठीक ठीक स्थानपर स्थानान्तरित करना है।

कण्ठ-कर्णी नाली से पटहका भीतरी भाग, बाहरी भागका कोटर और भीतर गये हुए शब्दोंके दबावका सामञ्जस्य (equalise the pressure) होता है।

रोशनीकी तरंगोंकी सहायतासे हमलोग आँखोंसे जिस तरह देखते हैं, उसी तरह वायु तरङ्गोंके सहारे हमलोग सुनते हैं।

तालाबमें ढेला फेंकनेपर जिस तरह चारो ओर गोल लहरें उठती हैं, उसी तरह कोई शब्द होनेपर हवामें लहरें उठती

८ नं० चित्र।



(१) बहि कर्ण (२) बाह्य कर्णनाली (३) कर्णपटह (४) मुद्गर
स्थि (५) धूमिकास्थि (६) रकाबास्थि (७) अर्द्धचक्राकार नालियां (८)
श्रवणी नाड़ी। १ से २—बाह्य कर्ण। ४ से ६—मध्य कर्ण। ७ से ८—अन्त कर्ण।

है। यह देखा गया है कि किसी घण्टेको बजानेपर वह घण्टा आवाज देते समय काँपता है और उससे लगी वायु कणिकाएँ भी काँपती हैं। ये वायु कणिकायें फिर अपने बाद वाली वायुकणिकाओं को चोट देकर कँपा देती हैं। इस तरह वायु कणिकाओं के आपसमें घात, प्रतिघातके कारण हवामें कम्पनका एक प्रवाह पैदा हो जाता है। यह प्रवाह कर्ण-कुहरमें प्रवेश करनेपर पटहपर चोट देता है और वह पटह काँपने लगता है। पटह फिर कानके बाद वाले तन्तु और स्नायुओं को कँपाता है। इस तरह जब श्रवण-स्नायु द्वारा वह मस्तिष्कमें पहुँचता है, तब हमलोग शब्दका अनुभव करते हैं।

कान अधिक खोदना अच्छा नहीं। यदि किसी तरह यह कर्ण-पटह एकबार फट गया तो जीवन भरके लिये मनुष्य बहरा हो जाता है। क्यों कि मनुष्यके लिये इसका फिर से सुधार करना असम्भव है। कर्ण-पटह इतना सूक्ष्म है, कि बहुत जोरकी आवाजसे बाज वक्त यह फट जाता है। अतएव, कानमें पीव पैदा होनेपर जोरसे पिचकारीकी धार देकर उसे धोना उचित नहीं है।

नाक।—यह चेहरेके बीचमें है। इसका जड़वाला भाग—मूल भागकी अपेक्षा अग्रभाग (अगला भाग) ज्यादा ऊँचा और चौड़ा है। किसीकी नाक ज्यादा उठी रहती है, किसीकी थोड़ी। नाक सात अस्थियोंसे बनी है —जैसे

(१) और (२) नाककी दोनो हड्डियाँ (Nasal bones) ये नाकके ऊपरी भागमें लगी हुई हैं (३) और (४) ये उदार दो हड्डिया (Inferior turbinated bones) ये दोनो नाक के भीतर बहुत ही घुमघुमोवाकी तरह हैं, (५) और (६) अश्रुवाहिनी दो हड्डिया (Lacrymal bones), ये आँखके गढ़ेसे लेकर नासा-गह्वर (नाकके गढ़े) तक फैली हुई हैं। ये दोनो हड्डीकी बनी नालियाँ ही आखसे लेकर नासा रन्ध्र (नाकका छेद) तक कुछ आसुओंको बहा लाती हैं, (७) नासा-फलकास्थि (vomer) यह पतली हड्डी नाकके दोनो छेदोंके बीच परदेकी तरह रहकर दोनो नासा-गह्वरोंके ठीक बीचोबीच रहती है।

८ नं० चित्र।



नासारन्ध्र दिखाई देता है। १८, ऊपरी कोमल तालु, १९ अस्थि निर्मित तालुका महराब, १०, ७, ६, घुमघुमौवा अस्थियां, १४ ऊर्ध्व हनुकोटर। देखिये नासा गह्वर किस तरह ऊर्ध्व हनु कोटरसे मिल गया है।

नाकमे एक बड़ा गह्वर जो दिखाई देता है, उसे नासा रन्ध्र (nostril) कहते हैं। यह गह्वर वायु

(palate) के ऊपरी भागसे करोटी (skull) की नली तक फैला हुआ है।

ऊपरकी घुमघुमौवा दोनों हड्डियोंके बीचमें और नासा-रन्ध्रको अलग करनेवाली बीचकी हड्डीसे लगी हुई श्लैष्मिक भिल्ली मौजूद है। मस्तिष्कसे झीपिरास्थि (Ethmoid) हड्डी के सैकड़ों छेदोंसे "आघ्राण स्नायु" सब (oflactory nerves) निकलकर अनगिनती शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त हो, इस श्लैष्मिक भिल्लीमें झूल रहे हैं। आघ्राण स्नायु (oflactory nerves) और और स्नायुओं से अलग मालूम होते हैं, क्योंकि इसमें एक धूसर वर्णका पदार्थ अधिक मात्रामें है, जो बहुत ही कोमल और फलकी गरी जैसा मालूम होता है। किसी तरहके गन्धवाले पदार्थके अणु सब हवामें उड़ते हुए इन स्नायुओं को छूते हैं। तब इनकी वजहसे उस पदार्थकी गन्ध मस्तिष्कमें पहुँचती है।

नाक घ्राणेन्द्रिय (सुगन्ध देनेवाली सूँघनेकी इन्द्रिय) और श्वास प्रश्वास सास लेने और छोड़ने का पथ है। मुँहसे सास लेना और छोड़ना अनुचित है। दोनों नासा-रन्ध्रोंका अगला भाग रोओंसे भरा रहता है। नासा-रन्ध्रसे सास लेनेके समय, हवाके साथ जो धूलके कण आदि रहते हैं, वे साँस लेनेमें इन रोओंमें ही फँसे रह जाते हैं। नाककी पेचीली दोनों हड्डियाँ, घूमकर बैठी हैं, इस वजहसे सास लेनेके राहकी लम्बाई बढ़ गयी है। इसीलिये, नाकके छेदसे

साथ लेनेपर इस लम्बी राहसे पारकर फेफड़ेमें हवा पहुँचनेमें बहुत देर लगती है और कुछ देरतक इस तरह शरीरके भीतर हवा रहनेके कारण वह क्रमश: गर्म होकर फेफड़ेमें पहुँचती है। अतएव, एकाएक सर्दी लगकर फेफड़ा खराब नहीं हो जाता। नाकसे सांस लेनेका अभ्यास रहनेपर, जहां दूषित या बदबूदार हवा रहती है, वह गन्धसे मालूम हो जाती है और वह स्थान तुरन्त छोड़ दिया जा सकता है। इसलिये, सबको हमेशा नाकसे सांस लेना चाहिये।

१० नं० चित्र।

मुँहका भीतरी भाग।—दांत, जीभ तालु यन्थि दोनों ओर दिखाई दे रही हैं।

(६) मुख-गह्वर (Mouth)।—मुख-गह्वरका आकार अण्डेकी तरह होता है। (१० नं० चित्र)। यह

श्लैष्मिक झिल्लीसे ढंका रहता है। इसके सामनेकी ओर दरवाजेकी तरह दो ओठ रहते हैं। इसके पिछले भागके नीचे "श्वास-नाली" और "अन्नवहा नाली" वगैरह पांच राहें हैं :— (१) कर्ण-रन्ध्रपथ (कण्ठकर्णी नाली Eustachian tube) (२) नासा रन्ध्रपथ (Nasal passage), (३) श्वासनालीका ऊपरी पथ या स्वर-यन्त्र (Larynx), (४) गलकच्छ (pharynx) और (५) पाकस्थलीका पथ (Gullet)। इसके ऊपरी भागमें तालु और ऊपरी दांतकी पंक्ति है। नीचेकी ओर जीभ और निचली दन्त पंक्ति है। और इसके दोनों पार्श्व दोनों गालोंसे जुड़े हैं। (११ नं० चित्र)।

श्लैष्मिक झिल्ली (Mucous membrane)—यह एक प्रकारकी कोमल त्वचा है। यह ग्रन्थियोंसे भरी है। श्लेष्माकी तरह एक प्रकारके तरल पदार्थसे यह हमेशा तर रहती है।

ओठ (Lips)।—ऊपरके ओठको "ओष्ठ" और नीचेवालेको "अधर" कहते हैं। दोनों ही ओठ पेशियोंसे बने हैं—इनमें केवल पेशियाँ ही हैं। इसके बाहरकी ओर त्वचाके द्वारा और भीतरकी ओर (मुँहगह्वरके भीतर) श्लैष्मिक झिल्लीके द्वारा ढंका है।

स्वर-यन्त्र (Larynx)।—यह श्वास प्रश्वासवाली नालीके ऊपर और जिह्वा मूल अर्थात जीभकी जड़में गलेमें रहता है। इसके बीचकी जगहपर टेंटुआ (Trachea)

११ नं० चित्र।

(१) ऊर्द्ध ग्रन्थि।
(२) निम्न ग्रन्थि।
(३) जिह्वा मूल।
(५) गलनाली।
(६) टेंटुआ।
(२१) उदर।
(९) उदरका भीतरी भाग।
(११) पित्ताशय।
(१०) यकृत प्रदेशका दाहिना बायाँ भाग।
१४, १२, १३, द्वादशांगुल अन्त्र।
(१५) क्षुद्र अन्त्रकी गेंडुरी।
(१६) अन्धान्त्र।
(१९) उद्गामी बृहदन्त्र।
(१७) दक्षिण ऊर्द्ध गामी अन्त्र।
(१८) अनुप्रस्थ बृहत् अन्त्र।
(१७) अधोगामी बृहदन्त्र।
(२०) मलद्वार।

लगा हुआ है। ड्रेकियाके नीचे वायुनली या ब्राङ्काई दो भागोंमें विभक्त होकर फेफड़ेमें घुस गयी है। वायुनली फेफड़ेसे ऊपर आकर मुख गह्वरमें खुल गयी है।



बाईं ओर दाहिनी ओर

स्थायी दाँतके निकलनेका समय—वर्षोंमें (In years)

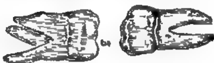
१७, १२, ६, ९, १०, ११, ८, ७ | ७, ८, ११, १०, ९, ६, १२, १७

से से से से

२५ १३ १३ २५



चर्वणक या मोलर चर्वणक या मोलर





द्विशिर Bicuspid द्विशिर Bicuspid





श्व Canine श्व Canine



छेदक Incisor छेदक Incisor





१२ नं० चित्र।

इनके कामोंके प्रभेदके अनुसार इन बत्तीस दाँतोंको चार भागोंमें विभक्त किया गया है —छेदक दन्त (incisor)

ये ऊपर नीचे मिलाकर ८ हैं, (२) श्व दन्त (canine)-इनकी संख्या ऊपर नीचे ४ है। द्विशिर दांत (bicuspid) ऊपर नीचे संख्या ८ है, (४) पेषक दन्त (molar)-इनकी ऊपर नीचे संख्या १२ है (१२ नं० चित्र)।

हरेक दांतमें तीन भाग दिखाई देते हैं। जैसे (क) "मूलदेश" (root या fang)—अर्थात दांतका खोकडकी तरह जो अंश मसूढ़ेके भीतर घुसा रहता है, (ख) ग्रीवा (neck)—अर्थात दांतका जो अंश जड़से लेकर सिरेतक फैला रहता है, यह भी मसूढ़ेके भीतर छिपा रहता है (ग) देह या शिखर (crown or body) अर्थात दांतका जो अंश मसूढ़ेके ऊपरी भागमें रहता है। (१३ नं० चित्र)।

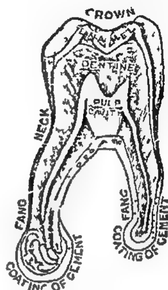
दांतके निर्माणका नियम या प्रणाली।—(Formation of teeth) जब छः महीनेका भ्रूण (Intra-uterine life) रहता है। उस समय अस्थायी दांतका निर्माण कार्य आरम्भ हो जाता है। इसके बाद इन्हीं दांतों के स्थान पर स्थायी दांतोंका अधिकार होने लगता है।

दांतका अस्वाभाविक रीतिसे बढ़ना, क्षय या ध्वंस होना, रोग और दवाका प्रभाव, अस्थि विकृति (हड्डियोंमें गड़बड़ी) और अस्थि-प्रदाह, वात रक्त या छोटी सन्धियों का वात आदि कारणोंसे दांत नष्ट हो जाते हैं।

दांत एक तरहकी हड्डी है, चूनेकी जातिका नमक (calcium salts) और शिरीष (gelatin) इसके गठनके

प्रधान उपकरण है। हरेक दाँतपर एक तरहका सफेद आवरण (dentine) रहता है। दातकी देहका आवरण

दन्तशिखर—Crown
दन्तवेष्ट—Enamel
दन्त-कोष—Pulp Cavity
दन्त ग्रीवा—Neck of tooth
दन्त मूल—Fang or root
दन्त-आवरण—Dentine
सीमेण्टका आवरण—Coating of cement



चित्र न० १३।

पत्थरकी तरह होता है। यह बहुत कडा और चिकना होता है। इसे दन्तवेष्ट (enamel) भी कहते हैं। निचले भागमें (अर्थात दन्त ग्रीवा और जडमें) आवरण कुछ कम सफेद और कडा रहता है। इसको ही "सीमेण्टका आवरक (Coating of cement)" कहा जाता है।

दाँतका आवरण (dentine) एक दम निखालिस नही होता। इसकी जडमें नोकडके पास एक छेद रहता है। इसी छेदसे होकर मस्तिष्कसे स्नायु और रक्तवहा नाडी प्रवेशकर इस के खोलमें फैली हुई है। ये रक्तवहा नाडियाँ और स्नायु ही दातोंकी मज्जा (tooth-pulp) है।

भोजनपर ही जीवन निर्भर रहता है। इसके अलावा दांतों पर आहार भी बहुत कुछ निर्भर करता है। अच्छी तरह चबाकर खानेसे भोजन सहजमें ही पच जाता है। अतएव, बचपनसे ही इस विषयमें सावधान रहना चाहिये। भोजन करने बाद यदि दांतमें कुछ अडा रहे तो सींक या कोई साफ महीन लकडीसे उसे निकाल डालना चाहिये। थोडा-सा भी खानेबाद मुँह और दाँत अच्छी तरह मलकर धो डालना उचित है, नहीं तो खाद्य पदार्थका रस या खाद्य-पदार्थके कण, थोडी देरबाद ही सडकर अम्लरस हो जाते हैं। यह अम्लरस लगा रहनेके कारण दांतका आवरण (enamel) धीरे धीरे क्षय होने लगता है और वह जल्दी ही नष्ट हो जाता है। क्योंकि दांतका आवरण जितना कडा होता है, दांत उतने ही कडे नहीं होते। यहां तक कि दन्तावरण (dentine) में थाडोसी हवा लगनेसे ही वह नष्ट हो जाता है।

चिवाना (Mastification)।—यह काम ऐच्छिक पेशीसे होता है। चर्वण पेशी (Masseter Muscle) वगैरह से जबडा उठता है और द्विगुम्फिका पेशी (Digastic muscle) वगैरहकी सहायतासे दबाव पडता है। एक्सटर्नल टेरिगोनमके द्वारा (Grinding) पीसनेमें सहायता मिलती है।

ऐफारेण्ट स्नायुके द्वारा (Afferent) चबानेमें सहायता मिला करती है।

जीभ (Tongue)।—जीभ स्वाद लेनेका प्रधान सहायक यन्त्र है। यदि जीभ नहीं रहती तो हमलोग बोल भी नहीं सकते। दूसरी बात यह कि यदि जीभको "स्वास्थ्य-दर्पण" कहा जाये तो भी अत्युक्ति न होगी। स्वास्थ्य अच्छा रहने पर जीभका रंग स्वाभाविक रहता है, नहीं तो वह बदरंग हो जाती है। चिबानेमें भी जीभ बहुत कुछ सहायता करती है। जीभ मांसपेशी से बनी रहती है और उसपर श्लैष्मिक झिल्ली चढ़ी रहती है।

उप-जिह्वा (Uvula)।—इसको अलजिह्वा भी कहते हैं। यह कोमल तालु (Soft palate) के पीछे झूलती रहती है या लटका करती है।

समूची देहका पहला अंश या शरीरका आद्य मुण्ड या मस्तक है। माथेकी हड्डी, इसके बाद कान, आँख, नाक, मुखगह्वरके सब यन्त्र आदि इसके बाद मस्तक आदि और स्नायुओंकी बात संक्षेपमें वर्णन कर अब **मध्य शरीर** या **धड़** और मेरुदण्ड वगैरहका वर्णन किया जाता है।

मध्य शरीर।

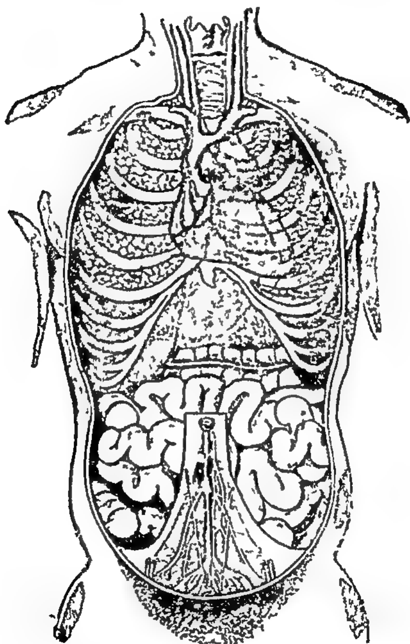
शरीरके जिस अंशके ऊपर माथा है और जिसमें हाथ पैर आदि जुड़े हुए हैं, उसको ही मध्य शरीर कहते हैं। अँगरेजीमें इस देह-काण्ड या धड़को "Body or trunk" कहते हैं। हाथ पैरका वर्णन अलग किया गया है।

२। धड़। (Body)

गलेसे कमर तक शरीरका जो भाग है, उसे "धड़" या "काण्ड" (body or trunk) कहते हैं। यह धड़ ही मुण्ड को धारण या वहन करता है। मुण्ड, दोनों हाथ और दोनों पैरों के सिवा, शरीरके बाकी सब अंश इसीके अन्तर्गत हैं। (१४ न० चित्र)

५४ हड्डियोंसे धड़का यह ढाँचा बना है:—जैसे, (क) मेरुदण्ड (पीठकी रीढ़) में २६ हड्डियाँ, (ख) छातीकी हड्डी १ (ग) पञ्जरेकी हड्डियाँ २४, (घ) कमरकी हड्डी २ (ङ) और जिह्वामूलकी हड्डी १।

गर्दनके पिछले भागसे लेकर कमरतक, पीठके बीचोबीच में जो लम्बी हड्डी, लम्बे लम्ब फैली हुई है, उसे **"मेरुदण्ड"** (पीठकी रीढ़) (spine or back-bone) कहते हैं। यह शरीरका स्तम्भस्वरूप है, इसीपर मस्तक रखा हुआ है। धड़को यही धारण किये हुए है। मेरुदण्डमें एक हड्डी नहीं



चित्र नं० १४ ।

इसमें स्वरयन्त्र, श्वासनाली, फुसफुस, हृत्पिण्ड, पाकस्थली, उदरमें दाहिनी ओर यकृत, बाईं ओर प्लीहा, मूत्र-पिण्ड, आंत, मूत्राशय प्रभृति दिखाया है ।

है। यह छोटी छोटी २६ हड्डियों से बनी एक मालाकी तरह है —जैसे, "पिक्षचञ्चु-अस्थि (Coccyx)" यह १ हड्डी-मेरुदण्डकी सबसे नीचेवाली हड्डी है। त्रिकोण अस्थि (Sacrum) पिक्षचञ्चुकी हड्डीके ऊपरवाली हड्डी है। यह पाँच अस्थियोंसे बनी हैं। यौवनमें यह सब मिलकर एक हो जाती है। मेरुदण्डकी प्रत्येक हड्डीको कशेरुका कहते हैं। ये कशेरुकाएँ एकके ऊपर एक रखी हैं। इसी तरह लगातार ऊपरतक सजायी हुई है। समूचा मेरुदण्ड एक कशेरुकाओं की समष्टि है।

प्रत्येक कशेरुकाके बीचमें एक एक छेद रहता है। इस तरह कशेरुकाके सब छिद्रों ने मिलकर एक खोखली नलीका आकार धारण किया है। उस नलीके बीचमें मेरुदण्डका स्नायु रज्जु रहता है।

प्रत्येक कशेरुकाकी तीन शाखाएँ है।—उनमें एक बीच से और दो बगलसे निकलती है। हरेक कशेरुकाके नीचे एक उपास्थि है। मेरुदण्ड कितनी ही अलग अलग कशेरु काओं'से बना है। इसीलिये, शरीर सहजमें ही झुकाया जा सकता है और उनमें आपसमें रगड भी नही लगती।

मेरुदण्डके निचले भागकी कशेरुकाएँ ऊपरवाली कशेरु-काओं से बड़ी और कडी हैं।—क्यों कि ये ही शरीरका भार वहन करती हैं।

कशेरुका या कमरकी हड्डी (Lion bones or lumber vertebrae)" ये पाँच हैं (ये त्रिकोण अस्थिके ठीक ऊपरवाली अस्थियाँ हैं), "पीठकी हड्डी (back bones)" १२ हैं। (ये कमरके ठीक ऊपरवाली हड्डी है), "गर्दनकी हड्डियाँ (neck bones)" सात है। (ये पीठकी अस्थिके ठीक ऊपरवाली हड्डियाँ हैं)।

गल देश (गला) के बीचमें जो एक गड्ढे जैसा है, वहासे छातीके ठीक बीचो बीच जो लम्बा गाठ भरा हाड सीधा पेटकी ओर चला आया है, उसे **वक्षोस्थि** या छातीकी हड्डी (sternum or breast bones) कहते हैं।

वक्षोस्थि और पञ्जरास्थि।—यह एक लम्बी, पतली और संकीर्ण अस्थि है। यह वक्षस्थलके ठीक बीचो बीचमें है। इसका निचला भाग कोमल हड्डीसे बना हुआ है। इसका ऊपरी भाग गलदेशके नीचेवाली हड्डीसे बँधा हुआ है। पञ्जरास्थि (पञ्जरेकी हड्डिया) सब इसकी दोनो ओर लगी हैं। अर्थात छातीकी हड्डीके दोनों ओर लम्बे लम्ब जो २४ हड्डियां हैं, उन्हें **पञ्जरास्थि** या **पर्शुका** कहते हैं। ये पञ्जरास्थिया पीठकी कशेरुकाओंसे बाहर निकल टेढी हो, वक्षोस्थिसे मिल गई हैं। ये सब एक तरह की नही है। १२ जोड या २४ पञ्जरास्थिमें ७ जोड अर्थात १४ अस्थियां वक्षोस्थिसे मिली है। तीन जोडा पञ्जरास्थि पहले कोमलास्थिके सहयोगसे आपसमें मिल गयी हैं। बाकी

दो जोडे पञ्जरास्थि अलग अलग है। ये वक्षोस्थिसे किसी तरह मिली नहीं है।

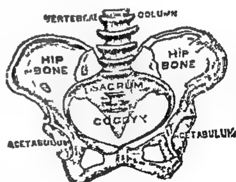
पञ्जरास्थियोंके जो सात जोडे ठीक ठीक और स्पष्ट रूपसे वक्षोस्थिसे मिल गये है, उन्हे **पूर्ण पञ्जरास्थि** कहते हे। ये वक्षके नीचे है। पीठकी कशेरुकाके प्रत्येक ओरसे १२ अस्थिया बाहर निकलती है। पञ्जरास्थिया पीठकी कशेरुकाओंसे मिली हुई है। यहापर कई सन्धिया है और इसी लिये, पञ्जरास्थियोंको ऊपर नीचे हटाया जा सकता है। एक पञ्जरास्थि और उसके बाद वाली पञ्जरास्थिके बीचका स्थान माससे भरा है। एक श्रेणीकी मास-पेशीकी सहायता से वक्षस्थलके बीचमें श्वास लेनेकी हवा प्रवेश करते समय ये पञ्जरास्थिया फूल उठती है और दूसरी श्रेणीकी मास पेशीकी सहायतासे वक्ष गह्वरसे श्वास-वायु बाहर निकलने के समय वह बैठ जाती है।

इस तरह मेरुदण्ड, छातीकी हड्डी और पञ्जरास्थि मिलकर "वक्ष-गह्वर (Thorax)" बना है।

वस्ति देश।—(Pelvis) कटि-देश (कमर) के दोनों ओर हाथ लगानेसे "कमरकी हड्डियाँ" दोनो स्पष्ट मालूम होती है। इन दोनो हड्डियोंको "श्रोणिफलक या नामहीन अस्थि (ossa inominata)" कहते हैं। कमर की यह दोनों अस्थिया और मेरुदण्डकी त्रिकोण अस्थि और पिकचञ्चु अस्थि—ये चार अचल हड्डिया (immovable

bones)" लेकर ही एक गह्वर बनता है। इस गह्वरको "वस्ति-गह्वर" (pelvis) कहते हैं। ये चार हड्डिया इस तरह आपसमे मिली है कि वस्तिगह्वर देखनेमें ठीक मानो एक बिना तलीके प्याले (bottomless cup) की तरह मालूम होता है। प्रत्येक "श्रोणीफलक" तीन अस्थियों से मजबूतीसे मिला हुआ है। सबसे ऊपरवाली बडी हड्डी का नाम "कट्यास्थि" (ilium) है। पीछेवाली निचली हड्डीका नाम "वङ्क्षणास्थि (ischium)" है और सामने वाले अस्थिखण्डका नाम भिटपास्थि (Pubes) है। अस्थियोंके इन तीनो खण्डोने एकसाथ मिलकर "नामहीन अस्थि (ossa inominata)" बनायी है। जब मनुष्य शिशु अवस्थामे रहता है तब उपास्थिके मेलसे उनमें स योग साधित होता है। (१५ न'० चित्र)।

कटि-कशेरुका = Vertebral column
कूल्हेकी हड्डी = Hip bone
त्रिकोणास्थि = Sacrum
त्रिकचञ्चु अस्थि = Coccyx
ऊर्वस्थि शिर गह्वर = Acetabulum



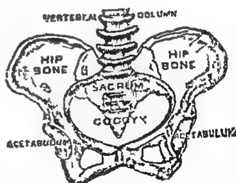
१५ न० चित्र।

महराबकी तरह जो हड्डी जिह्वामूल और श्वास-नालीके बीचमें गलेके मास भरे स्थानमें रहती है, उसका ही नाम जिह्वा-मूल अस्थि (hyoid bone) है।

छः अलग अलग प्रकारकी शारीरिक क्रियाओंके लिये हमारे शरीरमें छः प्रधान यन्त्र हैं —जैसे **हृत्पिण्ड** यन्त्र (जिसके द्वारा रक्त सञ्चालन क्रिया होती)। **फुसफुस** यन्त्र (जिसके द्वारा श्वास प्रश्वासकी क्रिया होती है फेफड़ा) **आमाशय आदि** (जिनके द्वारा पाचन क्रिया होती है) **उपस्थ** (जिनसे जनन क्रिया होती है)। ये छः स्वतन्त्र क्रियाएँ छः अलग अलग यंत्रों द्वारा होती हैं। इसलिये, कोई यह न समझ ले कि ये सब अलग अलग हैं। सच तो यह है कि शरीरका कोई भी अंग शरीरके दूसरे अंशसे अलग न तो है और न कभी अलग क्रिया ही जा सकता है। आँख कान, कण्ठ, हाथ-पैर वगैरह खास खास यन्त्र सब अलग होनेपर भी आपसमें एक दूसरेको सहायताकर शरीरका मङ्गल साधन करते हैं। साराश यह कि एक अंश या यन्त्रमें रोग होनेपर दूसरे दूसरे यन्त्रों या अङ्ग सबको भी विशेष रूपसे असुविधा मालूम होती है। जैसे श्वासयन्त्रकी क्रिया यदि रुक जाये तो हृत्पिण्ड और परिपाक यन्त्र वगैरह शरीरके अन्यान्य सूक्ष्म यन्त्र सब भी धीरे धीरे निस्तेज हो जाते हैं और धीरे धीरे मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है। यदि एक सप्ताह तक किसीको पाखाना न हो तो भूख प्यास और पाचन क्रियामें गड़बड़ी पैदा हो जाती है और कलेजा धड़कने लगता है सरमें चक्कर आता है और सारे शरीरमें आलस्य मालूम होने लगता है।

bones)" लेकर ही एक गह्वर बनता है। इस गह्वरको "वस्ति-गह्वर" (pelvis) कहते हैं। ये चार हड्डिया इस तरह आपसमें मिली हैं कि वस्तिगह्वर देखनेमें ठीक मानो एक बिना तलोके प्याले (bottomless cup) की तरह मालूम होता है। प्रत्येक "श्रोणीफलक" तीन अस्थियों से मजबूतीसे मिला हुआ है। सबसे ऊपरवाली बड़ी हड्डी का नाम "कट्यास्थि" (ilium) है। पीछेवाली निचली हड्डीका नाम "वंक्षणास्थि (ischium)" है और सामने वाले अस्थिखण्डका नाम विटपास्थि (Pubes) है। अस्थियोंके इन तीनो खण्डोने एकसाथ मिलकर "नामहीन अस्थि (ossa inominata)" बनायी है। जब मनुष्य शिशु अवस्थामें रहता है तब उपास्थिके मेलसे उनमें संयोग साधित होता है। (१५ नं० चित्र)।

कटि-कशेरुका = Vertebral column
कूल्हेकी हड्डी = Hip bone
त्रिकोणास्थि = Sacrum
पिकचञ्चु अस्थि = Coccyx
उर्वस्थि शिर गह्वर = Acetabulum



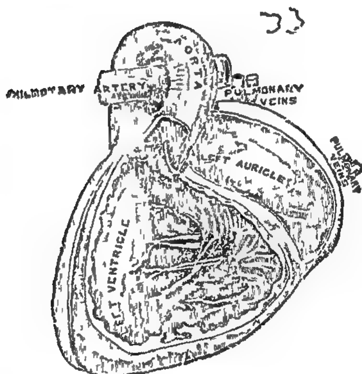
१५ नं० चित्र।

महराबकी तरह जो हड्डी जिह्वामूल और श्वास-नालीके बीचमें गलेके मांस भरे स्थानमें रहती है, उसका ही नाम जिह्वा-मूल अस्थि (hyoid bone) है।

छ अलग अलग प्रकारकी शारीरिक क्रियाओंके लिये हमारे शरीरमें छ प्रधान यन्त्र है —जैसे **हृत्पिण्ड** यन्त्र (जिसके द्वारा रक्त संचालन क्रिया होती)। **फुसफुस** यन्त्र (जिसके द्वारा श्वास प्रश्वासकी क्रिया होती है-फेफड़ा) **आमाशय आदि** (जिनके द्वारा पाचन क्रिया होती है) **उपस्थ** (जिनसे जनन क्रिया होती है)। ये छ स्वतन्त्र क्रियाएँ छ अलग अलग यन्त्रों द्वारा होती है। इसलिये, कोई यह न समझ ले कि ये सब अलग अलग हे। सच तो यह है कि शरीरका कोई भी अंश शरीरके दूसरे अंशसे अलग न तो है और न कभी अलग क्रिया ही जा सकता है। आँख कान, कण्ठ, हाथ-पैर वगेरह खास खास यन्त्र सब अलग होनेपर भी आपसमें एक दूसरेकी सहायताकर शरीरका मंगल साधन करते है। साराश यह कि एक अंश या यन्त्रमें रोग होनेपर दूसरे दूसरे यन्त्रो या अङ्ग सबको भी विशेष रूपसे असुविधा मालूम होती है। जैसे श्वासयत्रकी क्रिया यदि रुक जाये तो हृत्पिण्ड और परिपाक यत्र वगैरह शरीरके अन्यान्य सूक्ष्म यन्त्र सब भी धीरे धीरे निस्तेज हो जाते है और धीरे धीरे मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है। यदि एक सप्ताह तक किसीको पाखाना न हो तो भूख प्यास और पाचन क्रियामें गडबडी पैदा हो जाती है और कलेजा धडकने लगता है, सरमें चक्कर आता है और सारे शरीरमें आलस्य मालूम होने लगता है।

नीचेके दोनों गह्वरोंको (जो बाएँ ओर दाहिनेके पास पास हैं) रक्तप्रवाही स्थाली या हृद्कोटर (क्षेपक कोष्ठ— ventricles) कहते हैं (१७ न० चित्र)

चित्र न० १७।



महाधमनी (Aorta)
वृहत् फुसफुसीया धमनी (Pulmonrry artery)
फुसफुसीया शिरा (Pulmonary vein)
वाम ग्राहक कोष्ठ (Left auricle)
वाम क्षेपक कोष्ठ (Left ventricle)

ऊपरी हृद्कोपसे या ग्राहक कोष्ठसे हृद्कोठर या क्षेपक कोष्ठमें रक्त आनेके लिये हरेक ओर एक एक छेद है। इन

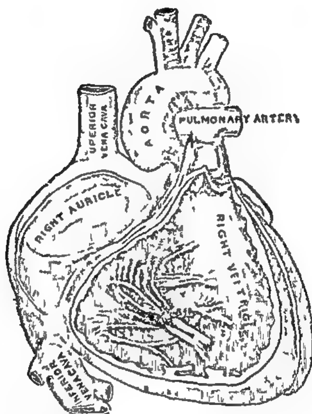
छेदोंमें एक एक कपाट (valve) है। ये कपाट केवल एक ओर ही खुल सकते हैं। और खुलते भी इस ढंगसे हैं कि ऊर्द्ध हृदकोष (ऊपरी ग्राहक कोष्ठ) से रक्त हृद्-कोटर या क्षेपक कोष्ठमें ही आ सकता है, पर हृद्कोटरसे ऊर्द्धकोषमें जा नहीं सकता। क्योंकि वह दरवाजा या कपाट उस समय आपही बन्द हो जाता है। दाहिने ओरके द्वारमें तीन कपाट हैं इसी लिये इसका नाम "त्रि-कपाट (tricuspid valve)" है। बाईं ओरके द्वारमें दो कपाट हैं, इस वजहसे उसका नाम "द्विकपाट" (bicuspid valve) है। दाहिनी ओरके दोनों प्रकोष्ठोंसे बाईं ओरके दोनों प्रकोष्ठों का किसी तरहका सम्बन्ध नहीं है। इसलिये, एक ओरके प्रकोष्ठोंका रक्त दूसरी ओरके प्रकोष्ठमें प्रवेश नहीं कर सकता।

शरीरके सब स्थानोंमें रक्त सञ्चालन क्रिया करनेवाला प्रधान यन्त्र "हृत्पिण्ड" है। मानो ठीक एक बड़ा दमकल है। इसी स्थानसे साफ किया हुआ या शोधित रक्त, धमनी रूपी नलीके सहारे शरीरके सब स्थानोंमें पहुँच जाता है और शिरा रूपी नलीके द्वारा शरीरका सब दूषित या अशोधित रक्त वहाँ अर्थात हृत्पिण्डमें शुद्ध होनेके लिये आ पहुँचता है।

सबसे प्रधान धमनीका नाम "वृहद्धमनी काण्ड" (महाधमनी aorta) है। यह सबसे बड़ी और स्थूल धमनी है। यह हृद्कोटरसे अर्थात् क्षेपक कोष्ठसे निकलकर क्रमशः सूक्ष्मसे सूक्ष्मतर होती हुई और हजारों शाखा प्रशाखा

विभक्त होकर शरीरके सभी स्थानोंमें फैली हुई है। (१८

चित्र नं० १८।



महाधमनी (Aorta)
ऊर्द्ध महाशिरा (Superior venacava)
बृहत् फुसफुसीया धमनी (Pulmonary artery)
दाहिना ग्राहक कोष्ठ (Right auricle)
दाहिना चेपक कोष्ठ (Right ventricle)
अधोगामी महाशिरा (Inferior venacava)

नं० चित्र) छोटी छोटी धमनियों को धमनिका (arterioles) आर्टिरियोलस कहते हैं।

शरीरकी अनगिनती शिराएँ, हृत्पिण्डके पास धीरे धीरे चौड़ी हो जाती हैं और वहां एकत्र होकर अन्तमें दो अलग महाशिरामें मिलकर दाहिने हृदकोषमें प्रवेश करती हैं। मस्तक आदि ऊर्द्ध अङ्गों की शिराएँ सब जिस महाशिरामें परिणत हो जाती हैं, उसे ऊर्द्ध महाशिरा (Superior venacava) और शरीरके अधोभागकी शिराएँ सब जिस महाशिरामें परिणत होती हैं, उसे अधो महाशिरा (inferior venacava) कहते हैं।

रक्त-सञ्चालन।—शरीरमें रक्त सञ्चालन क्रियाकी गति विधि बहुत ही आश्चर्य-जनक है। हमारे शरीरका सार पदार्थ रक्त ही है। हमारे शरीरकी उत्पत्ति भी रक्त-कोषाणुओं से ही हुई है। रक्त ही देहके सब पदार्थों का मूल उपादान है। वास्तवमें अस्थि, मज्जा, मेद, मांस, स्नायु, तन्तु, वीर्य, त्वचा वगैरह शरीरके सभी पदार्थ इस रक्तसे ही पैदा होते हैं और रक्तसे ही पुष्ट होते हैं। केश और नखके अलावा, शरीरके जिस स्थानपर रक्तका प्रवाह नहीं होता है, वह ध्वंस हो जाता है। शरीरके सभी अङ्गों को रक्त ही जीवित और पुष्ट रखता है। प्रति मुहूर्त शरीर के सब अंशों का जो क्षय होता है, उसकी पूर्त्ति रक्तसे ही होती है। शरीरके जिस अंशमें जिस चीजकी कमी होती है रक्त ही उस स्थानको वह चीज प्रदान करता है। दूषित और बेकार पदार्थों को शरीरसे निकाल देना भी इसीका काम है। निर्मल रक्त हृत्पिण्डसे निकलकर

सब अंगोंको धोता हुआ दूषित होकर हृत्पिण्डमें लौट आता है। उस दूषित रक्तका संशोधन होकर वह फिर हृत्पिण्डसे निकलता है और दूषित होकर फिर वहाँ प्रवेश करता है। शरीरमें इस तरह लगातार खूनका चक्कर लगा करता है। रक्त जिस समय हृत्पिण्डसे बाहर निकलता है, उस समय निर्मल रहनेके कारण उसका रंग चमकीला-लाल रहता है, पर जिस समय वह हृत्पिण्डमें लौटता है, उस समय घर धोए हुए पानीकी तरह दूषित पदार्थोंका संयोग हो जानेके कारण गदला हो जाता है। अर्थात उस का रङ्ग काला या बैंगनी हो जाता है। शरीरके ऊपरी भाग का सब दूषित खून "ऊर्द्ध्व महाशिरा (Superior vena-cava)" द्वारा और निचले भागका दूषित खून सब अधोगा महाशिरा (Inferior venacava) द्वारा ऊर्द्ध्व हृद्-कोष (right auricle) में जाता है। जब दाहिना ऊपरी हृद्-कोष दूषित रक्तसे भर जाता है, तब वह सिकुडने लगता है। सिकुडनेपर उसका निचला "त्रिकपाटद्वार (tricuspid valve) पर दबाव पडता है। इस दबावसे यह दरवाजा खुल जाता है और समूचा रक्त "दाहिने हृद्कोटरमें" प्रवेश करता है। दाहिने हृद्कोटरके खूनसे भर जाते ही वह सिकुडने लगता है। इसका ऊपरी त्रिकपाट द्वारपर दबाव पडते ही वह बन्द हो जाता है। इसलिये, वह रक्त फिर ऊर्द्ध्व हृद्कोषमें लौटकर नहीं जा पाता। इस समय दबावके कारण रक्त "वृहत् फुस्फुसीया धमनीमें (pulmonary

vein) में प्रवेश करता है। यह वृहत् फुसफुसीया धमनी बाएँ हृद्कोटरसे निकलकर कुछ दूर जाकर दो शाखाओंमें विभक्त हो, दोनों ओरके फेफड़ोंमें खुल गयी है। इससे बाद रक्त तुरन्त फेफड़ेमें जा पहुँचता है। यह दूषित काला रक्त फेफड़ेमें जाकर विशुद्ध होकर फिर लाल रङ्गका हो जाता है।*

फेफड़ेमें शुद्ध होकर रक्त चार "फुसफुसीया शिरा (pulmonary veins)" द्वारा बाएँ हृद्कोष (left auricle) में जाता है। यह खूनसे भरते ही सिकुड़ने लगता है। अब खूनके दबावसे बाएँ हृद्कोषका नीचेवाला "द्विकपाट" खुल जाता है और यह रक्त तुरन्त बाएँ हृद्कोटरमें गिरने लगता है। खूनसे भरते ही "बायाँ हृद्कोटर" सिकुड़ने लगता है। इसके ऊपरवाले द्वारमें द्विकपाटमें दबाव पड़ते ही वह बन्द हो जाता है। इस लिये यह रक्त फिर ऊपरवाले प्रकोष्टमें लौटकर नहीं जा सकता। अब दबावके कारण यह रक्त "वृहद् धमनीकाण्ड" (Aorta) की राहसे बाहर निकल जाता है। शरीरके सभी भागोंमें फैली हुई इस वृहद्धमनी काण्डकी शाखा प्रशाखाओंमें यह रक्त धीरे धीरे फैल जाता है, अन्तमें यह रक्त उन समस्त असंख्य नालियोंमें फैल जाता है, जो केशकी तरह समूचे शरीरमें फैली हुई है। इन सूक्ष्म नालियोंका नाम केशिका नाड़ि-

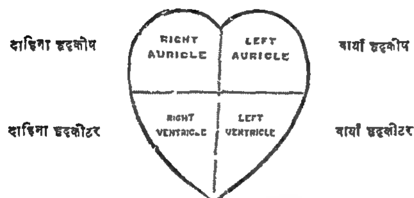
* फुसफुसकी आकृति, काम और किस तरह यह दूषित रक्त फैलाकर शुद्ध होता है, यह इसके फुसफुस अध्यायमें लिखा गया है।

(Capillaries) है। इन कैशिका नाडियोंके ऊपरका चमडा इतना पतला है, कि इस चमडेके भीतरसे ही रक्त, क्षय हुई मास पेशियोंको नया मास बनानेके लिये उपादान प्रदान करता है और स्वयं क्षय-प्राप्त मांस आदि से भरी चीजें ग्रहण कर लेता है। इस तरह निर्मल लाल रक्त मैला होकर नीले रङ्गका हो जाता है। यह दूषित रक्त कैशिक नाडियोंके संयोगसे असंख्य पतली शिराओंमें चला जाता है। इसके बाद यह रक्त क्रमशः छोटी शिराओंसे बडी शिराओंमें, वृहत शिराओं से दोनों महाशिराओं में (superior and inferior venacava) और वहाँसे दाहिने हृदकोषमें जाता है। यहासे यह दूषित रक्त निचले हृद्कोषमें जाता है और वहासे फेफडेमें जाता है। फेफडेमें यह खून साफ होकर फिर हृद्पिण्डके बाईं ओर प्रवेश करता है। इसी स्थानसे यह निर्मल रक्त धमनी काण्डके साथ सारे शरीरमें फैल जाता है और वह दूषित होकर फिर हृत्पिण्डमें आता है तथा हृत्पिण्डमें निर्मल होकर फिर शरीरके सब अंशोंमें प्रवाहित होता है। हमारे इस शरीरमें जीवनभर दिन रात यह विचित्र घटना घटा करती है।

हृत्पिण्डके दोनों हृद्कोष (auricles) एक साथ संकुचित होकर दोनो हृद्कोटरमें (ventricles) जब खूनको देते हैं, उस समय हृद्कोटर (ventricles) दोनो फैलकर रक्तको सरलता पूर्वक आने देते हैं, इसके बाद दोनों हृद्कोटर संकुचित होकर जब रक्तपर दबाव डाल

कर फुसफुसमें तथा शरीरके अन्य स्थानों में भेजते हैं, उस समय दोनों हृदकोष फैलकर फुसफुस और दूसरे स्थानसे लाये हुए रक्तको वहाँ सरलतासे जाने देते हैं। अतएव, जिस समय ऊपरके दोनों ग्राहक कोष्ठ सकुचित होते हैं, उस समय नीचेके

चित्र नं० १८।



दोनों कोटर फैलते हैं और जब नीचेके दोनों कोटर सकुचित होते हैं तो ऊपरवाले फैलते हैं। इस तरह पर्यायक्रमसे, हृत्पिण्डके फैलने और सिकुड़नेकी वजहसे रक्त सारे शरीरमें प्रवाहित होता है। यह जीवन प्रवाह रूपी रक्त प्रवाह एक क्षणके लिये भी विश्राम नहीं करता। हृदुपिण्डसे झोंकसे रक्तका प्रवाह धमनीमें जाता है, इसी वजहसे हृत्पिण्डके स्पन्दन के अनुसार नाड़ी या धमनीका भी स्पन्दन हुआ करता है।

इसीलिये, हृदयके स्पन्दनकी अवस्था धमनीसे मालूम होती है। यह धमनी या नाड़ीका स्पन्दन कलाईमें, पैरके गुल्फमें, गलेमें और कनपटीमें अच्छी तरह

आता है। पर हाथकी कलाईमें "नाड़ी (pulse)" की परीक्षा करना ही ठीक है। छातीकी बाईं ओर हाथ रख कर या कान लगाकर हृत्पिण्डकी फैलने और संकुचित होनेकी क्रिया अनुभव की जा सकती है।

ब्लड-प्रेशर (Blood pressure रक्तका दबाव)।—आजकल हमेशा सुना जाता है कि खूनका दबाव या प्रेशर बढ़ जाता है। इसीलिये, हमलोग उसका विवरण यहाँ देते हैं।

हरेक बार संकोचनके समय हृत्पिण्ड चारसे छः आउन्स तक रक्त फेफड़ेमें देता है। धमनियोंके स्वाभाविक विस्तार गुणके कारण उनमें रक्त भरा रहनेपर भी वे अधिक रक्त धारण कर सकती हैं। (इसको Kinetic energy कहते हैं) इसके बाद peripheral resistance या सीमान्तकी प्रतिरोध शक्तिके बलपर, वह अधिक रक्त केशिका नाड़ियोंमें फैल जाता है। बाईं ओरके क्षेपक कोष्ठमें ही (Left ventricle) ब्लड प्रेशर अधिक दिखाई देता है।

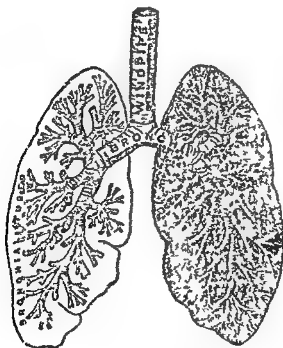
नाड़ी-स्पन्दन।—स्वस्थ अवस्थामें, जवानीमें हृद्पिण्डकी गति पुरुषोंकी एक मिनिटमें ७२ बार होती हैं। जन्म लेनेके समय एक मिनिटमें १२०—१४० बार रहती है। वृद्धावस्थामें ६०—७० बार रहती है। औरतोंकी नाड़ीका स्पन्दन कुछ अधिक रहता है।

भिन्न भिन्न अवस्थाओंमें, भोजनके बाद, मानसिक उद्वेगसे या क्रोध अथवा सन्ताप बढ़ जानेपर नाड़ीका स्पन्दन बढ़

जाता है। नाडीकी गति और सन्तापका समानुपात ४ और १ हुआ करता है।

(ख) फुसफुस (Lungs)।—इसे फेफड़ा भी कहते हैं। हमलोगोंके दो फेफड़े या फुसफुस होते हैं। यह वक्षगह्वरमें हृत्पिण्डके दोनों ओर रहते हैं और इनकी स्थितिके

चित्र नं० २०।



श्वासनली—Wind pipe.   वायुनली—Bronchi

श्वासोपनली—Bronchial tubes

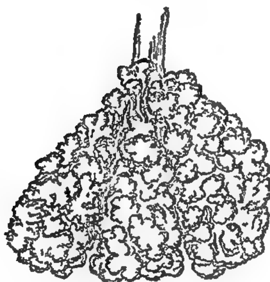
अनुसार इन्हें दहिना फुसफुस (right lung) और बायां फुसफुस (left lung) कहा जाता है। (२० न०

दोनो फेफडोंका रङ्ग कुछ धुमैला होता है। ये स'चाकी तरह सिकुडे होते हे। ये कोमल और हलके होते हैं। इनका आयतन हृत्पिण्डको अपेक्षा कुछ बड़ा होता है। दाहिने फेफडेमें तीन और वाएँ फेफडेमें दो "खण्ड (lobes)" होते हैं। प्रत्येक खण्ड और भी कितने हो छोटे छोटे उप खण्डोंमें बटा हुआ है। दोनों फेफडोंको अनगिनतो वायु-कोष (air cells) श्वासोपनाली (bronchial tubes), धमनी, शिरा और कैशिका नाडियोंकी समष्टि कहा जा सकता है। अर्थात इस तरहके सूक्ष्म यन्त्रोंसे ही दोनो बने हैं। हृत्पिण्डकी तरह प्रत्येक फेफडेमें एक एक थैली या आवरण है। इसको फुसफुसावरण (pleura) कहते हैं। गलेके नीचेसे "श्वासनाली (wind pipe)" वक्षगह्वरमें आकर दो शाखाओंमे विभक्त हो गयी है।

इन दोनोंको "वायुनली" (Bronchi) कहते है। प्रत्येक वायुनलीके साथ एक एक फुसफुस मिला हुआ है। ये दोनों वायुनली फिर सूक्ष्मसे सूक्ष्मतर होती हुई असंख्य शाखा-प्रशाखाओंमें विभक्त हो कर फेफड़ेमें फैल गयी है। ये सब वायुनलीकी शाखाएँ है। प्रशाखाओंको "श्वासो-पनली" (bronchial tubes) कहते हैं। प्रत्येक श्वासो-पनालीके किनारे छोटे छोटे अङ्गूरके गुच्छेकी तरह कितने-ही कोष या थैलियाँ है। इन्हें फुसफुस कोष-गुच्छ (lung sacs) कहते हैं। (२१ नं० चित्र)। इनमें हरेक कोष हमेशा वायुसे पूर्ण रहता है। इसी लिये, इनमेंसे प्रत्येक

कोषको "वायु-कोष (air-cells)" कहते हैं। हृत्पिण्डसे "फुसफुसीया-धमनी (pulmonary artery) आकर अस ख्य

चित्र न० २१।



फुसफुस कोष गुच्छ = Lung-sacs

कैशिक नाड़ियाँ वायु कोषों के चारो ओर लगी रहती हैं। इनके दूसरे किनारे "फुसफुसीया-शिरा" के साथ मिले हैं।

पहले ही कहा जा चुका है कि हमलोगोंके फेफड़ो से हमलोग सास लेने और छोड़नेकी क्रिया करते हैं। वायुमें "अम्लजान (oxygen)" नामक एक तरहकी भाफ (gas) है। यह वाष्प (gas) हमलोगोंके जीवनका प्रधान सहाय हैं। शरीरके दूषित काले रक्तको मय कणिकाएँ श्वास प्रश्वासकी क्रियाकी सहायतासे, फुसफुस वायु-कोषमें गई हुई

वायुसे "अक्सिजान" भाफ ग्रहणकर साफ और लाल हो जाती है और शरीरके भीतरसे संगृहीत दूषित पदार्थ सब इस वायुमें छोड़ देती है। ये सब दूषित पदार्थ प्रश्वास क्रियाके द्वारा शरीरसे बाहर निकल जाते हैं। यह वायु-कोष और कैशिका नाड़ियाँ बहुत ही सूक्ष्म पतले पर्देसे ढँकी हैं। इसी लिये, इन सब पर्दोंके भीतरसे रक्तके साथ वायुके आदान प्रदानके कार्यमें गड़बड़ी नहीं होती।

वक्षोगह्वरके नीचेकी ओर एक चिपटी मांसपेशी है। इसको "उदर और वक्षः व्यवधायक" (वक्ष और उदरको अलग करनेवाली पेशी) (diaphragm) कहते हैं। इसका दूसरा नाम "वक्षोदर मध्यस्थ पेशी" भी है।

यह मांसपेशी, पंजरा, छातीकी हड्डी और मेरु-मज्जाके हाड़से इस तरह मिल गई है कि छातीके ऊपरकी ओर फट कर खुले छातेकी तरह हो जाती है। यही पेटको उदरगह्वरसे अलग करती है। जब यह संकुचित होती है, तब वक्षगह्वर और उसके साथ ही फेफड़ा फैल जाता है। इसीसे फेफड़े में वायु प्रवेश करता है। इसके अलावा यही पेशी जब खुले छत्तेकी तरह फैलती है, उस समय फेफड़ा संकुचित होता है। इस समय हमलोग श्वास छोड़ते हैं। श्वास लेनेके समय हवा खासकर नाकसे, कभी कभी मुख-गह्वर से और नाकके द्वारा प्रवेश करती है। इसके बाद मलनाली और श्वासनालीके भीतरसे होती हुई फेफड़ेमें जा

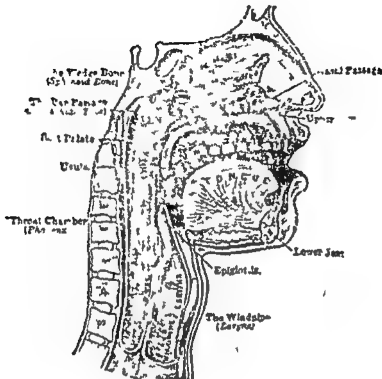
पहुँचती है और श्वासोपनालीके भीतरसे जाकर वायुसे फेफड़ों के कोषों को भर देती है।

अतएव, मालूम होता है कि हवा ही हमलोगोंके जीवनका प्रधान सहायक है। जिस जगह हवा न होगी, वहां हम-लोग जीवित नहीं रह सकते। इसी लिये, ऐसी जगह रहना ही उचित है, जहाँ खूब साफ हवा मिलती हो और इस विषयपर सदा दृष्टि रखनी चाहिये, कि रहनेकी जगह पर शुद्ध हवाका प्रवाह होता हो। जो हवा सांससे बाहर निकलती है, उसमें अम्लजान नहीं रहता और उसमें शरीर के त्यागे हुए बहुतसे दूषित पदार्थ भरे रहते हैं। इसीलिये, जब यह प्रश्वासमें निकली हुई हवा फिर शरीरमें घुसती है तो समूचे शरीरका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं है। यहांतक कि प्रश्वाससे निकली हुई हवा यदि कुछ देरतक, श्वासके साथ जाकर शरीरके भीतर रह जाये तो मृत्यु तक हो सकती हैं। इसीलिये, बहुत देरतक भीड़ की जगहमें रहना उचित नहीं है। जिस कमरेमें शुद्ध हवा अच्छी तरह आती हो, उसी कमरेमें रोगीको रखना सब तरहसे उचित है। सम्भव हो तो रहनेवाले कमरेमें बड़ी बड़ी खिड़कियां या दरवाजे रखना उचित है।

(ग) श्वासनाली (trachea) या (wind pipe)।—श्वासनाली प्राय चार इञ्च लम्बी होती है। यह खोखली और मोटी एक खास नली है। इसका भीतरी

भाग श्लैष्मिक झिल्लीसे ढका है और बाहरी भाग उपास्थि-वलय (bonds of cartilage) से घिरा हुआ है। यह गलेकी राहसे वक्षोगह्वरमें चली गयी है। वक्षोगह्वरमें आने के बाद यह दो शाखाओंमें विभक्त हो गयी है और इस तरह दो शाखाओंमें बँटकर एक शाखा दाहिने फुसफुसमें और दूसरी बाएँ फुसफुसमें चली गयी है। इन दोनों शाखाओं का नाम "वायुनाली है (bronchi)"। श्वास-नाली, इन दोनो फेफड़ोंमे हवा जाने आनेका प्रधान पथ (air passage) है। खासकर इन्हीं दोनो राहों से फेफड़े मे हवा जाती है। श्वासनालीके अगले भागको "कण्ठ-नाली या स्वरयन्त्र "(larynx or voice box)" कहते है। यह गलदेशके ऊपरी आधे भागमें लगा हुआ है। इस कण्ठनालीसे ही बोलनेका शब्द आदि निकलता है। कण्ठनाली (larynx) से एक छेद गलेके अगले भागमें या गलकक्षमें (pharynx) में खुला हुआ है। इसी गल-कक्षसे फिर एक छेद नासारन्ध्रमें और दूसरा छेद मुखगह्वर की ओर खुला है। (२२ न० चित्र)। अतएव, श्वास लेनेके समय वायु नासागह्वर या (मुख-गह्वर) से होता हुआ पहले गलकक्षमें जाता है। इसके बाद कण्ठनालीसे होता हुआ श्वासोपनालीमें और वहासे वायुनालीकी राहसे बाहर फेफड़ेमें पहुँचता है। श्वासनालीकी बगलकी राहसे ही "अन्नवहानाली (alimentary canal)" उतर गयी है। खानेके समय खाया हुआ पदार्थ, अन्नवहानालीमें

चित्र न० २२।



इसमें मुख-गह्वर और नासा पथ दिखाया गया है।

(१) कीलकास्थि (Sphenoid bone)
(२) कण्ठकर्णनाली (Eustachian tube)
(३) कोमल तालु (Soft Palate)
(४) शुण्डिका (Uvula) (५) गलकोष (Pharynx)
(६) नासा पथ (Nasal Passage)
(७) ऊर्ध्व हनु (Upper jaw) (८) निम्न हनु (Lower jaw)
(९) कठिन तालु (Hard palate)
(१०) जीभ (Tongue) (११) उपजिह्वा (Epiglottis)
(१२) स्वरयंत्र (Larynx)

न जाकर यदि एकाएक मुँहसे श्वासनालीमें जा पड़ता है, तो हमलोगों को "अंकुस" लगता है। पर भोजनका पदार्थ सहजमें ही श्वासनालीमें प्रवेश नहीं कर सकता। क्योंकि श्वासनालीके मुँहपर एक मांसका ढकना अर्थात "उपजिह्वा (epiglottis)" रहती है। खाद्य पदार्थ निगलनेके समय इस ढकनेसे श्वासनालीका मुँह बन्द हो जाता है और भोजन का पदार्थ गलेसे नीचे उतरते ही वह सहजमें ही श्वास-नालीका मुँह खोल देता है (मुखगह्वर अनुच्छेद देखिये)।

(घ) अन्नवहानाली (Alimentary canal) —जिस नालीसे भोजनके पदार्थ मुँहसे पाकस्थलीमें और आँतो के निचले भागमें चले जाते जाते हैं, उसको "अन्न-वहानाली" कहते हैं। इस अन्नवहानालीके अगले भागका नाम 'गलाग्र या गलकोष' (pharynx) है। इस गलकोष के ठीक निचले अंशको "गलनाली" (Oesophagus or gullet) कहते हैं। यह गलनाली (gullet) प्राय नौ इञ्च लम्बी पतली थैली है। इसके तीन "स्तर" (coats) हैं। (१) पहला अर्थात बाहरी स्तर (outer coat) ऐच्छिक मांसपेशी (voluntary muscles fibres) से बना हुआ है। पहली ऐच्छिक (voluntary) और दूसरी तथा तीसरी अनैच्छिक या (involuntary) है। ये तन्तु सब कुछ ऊपरसे नीचेकी ओर लटके हुए हैं। और कुछ वलयकी तरह चारों ओरसे घिरे हैं। ये गोलाकार

मांस पेशियां लगातार एकके बाद दूसरी संकुचित होकर पाकस्थलीमें खाद्य पदार्थके साथ पहुँचती हैं। (२) दूसरा अर्थात मध्यस्तर (middle coat) बाहरी और भीतरी स्तरको बांटनेवाला है। (३) तीसरा स्तर अर्थात अन्त-स्तर (inner coat) श्लैष्मिक ग्रन्थिसे बना हुआ है। इन ग्रन्थियोंसे निकले हुए श्लेष्मा द्वारा यह हमेशा तर रहता है। इसीलिये, बिना किसी रुकावटके भोजनका पदार्थ पाकस्थलीमें उतर जाता है। यह गलनाली वक्ष गह्वरसे जाकर उदर वक्ष-व्यवधायक पेशी (वक्षोदरमध्यस्थपेशी diaphragm) को चीरती हुई पाकस्थलीमें चली गयी है। इस अन्नवहानालीके निचले अंशको ही वृहत (बड़ी) और क्षुद्र (छोटी) आंत (intestines) कहते हैं। (४३ पृष्ठमें "मुखगह्वर" अनुच्छेद देखिये)।

२। उदर-गह्वर या कुक्षिदेश।
(Abdomen)

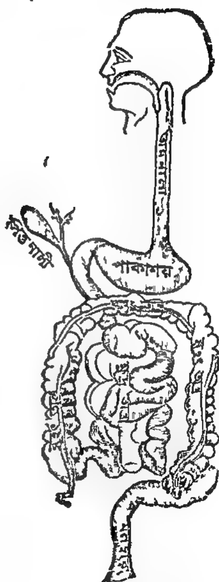
यह उदर-गह्वर वक्ष-उदर-व्यवधायक पेशी (diaphragm) द्वारा वक्षोगह्वरसे अलग हो गया है। (क) पाकस्थली, (ख) आंत, (ग) यकृत और पित्तकोष (घ) प्लीहा, (ङ) क्लोमग्रन्थि, (च) मूत्रग्रन्थि, (छ) मूत्राशय (ज) जननेन्द्रिय वगैरह यन्त्र इस उदर गह्वरमें सुरक्षित हैं।

(क) पाकस्थली या आमाशय (Stomach)—यह बाईं ओरके उदर गह्वरके ऊपरी भागमें और उदर

वक्ष-व्यवधायक मांसपेशीके ठीक नीचेकी ओर है। पाक-स्थली या पाकाशय बहुत कुछ भिश्तीके मशकके समान एक

चित्र नं० २३।

अन्नवहानाली (Alimentary canal)
पाकाशय (Stomach)
पित्तनाली (Bile-duct)
वृहत्-अन्त्र (Large Intestine)
क्षुद्र अन्त्र (Small Intestine)
मलद्वार (Anus)



टेढ़ी आकारकी विशेष थैली है (२३ नं० चित्र)। जिस मुँहसे खाया हुआ पदार्थ गलनाली (gullet) से, होता

हुआ पाकस्थलीमें प्रवेश करता है, उसको "प्रवेश द्वार या आगम द्वार (cardiac orifice) कहते हैं। पाकस्थलीसे खाये हुए पदार्थका जीर्णावशेष अंश आंतोंमें बाहर निकल जाता है, इसे वहिर्द्वार या निगम द्वार (pylorus) कहते हैं।

पाकस्थलीका निर्माण।—चार स्तरोंसे (coats) पाकस्थली बनी हैं। (१) पहला अर्थात सबके ऊपरवाला स्तर (peritoneum or serous coat) वास्तवमें पाकस्थलीका एक ढकना भर है। (२) दूसरा स्तर (muscular coat) यह मांसपेशी द्वारा बना हुआ है। पाकस्थलीमें भोजनका पदार्थ जाते ही ये सब मांसपेशियां लगातार एकके बाद एक सकुचित होकर, मानो लहरें उठने लगती हैं। इस तरह से दबाव देकर भोजनके पदार्थ को मथने (अर्थात पाकस्थलीके एक ओरसे दूसरी ओर तक बराबर चलाती और हिलाती है) लगती हैं। इसलिये, खाया हुआ पदार्थ तुरन्त चूर चूर हो जाता है और लेई या चटनीकी तरह बन जाता है। (३) तीसरा स्तर (Submucous or connective coat) रक्तवहानाली (blood vessels) और पाचक ग्रन्थि (gastric or peptic glands) से भरी हैं। (४) चौथा अर्थात अन्तरतम स्तर (Mucus coat) मधुमक्खीके छत्तेकी तरह दिखाई देता है। अधिक रस निकलनेके लिये इस श्लैष्मिक झिल्लीमें बहुतसे छोटे छोटे मुंह या छेद हैं।

पाचन क्रिया करनेका प्रधान यन्त्र यह पाकस्थली ही है। "आगम द्वार (cardiac orifice) की राहसे पाकस्थलीमें खाद्य पदार्थके जाते ही, मांस पेशियोंके संकोचन की वजहसे वह मथा (churred) जाता है और साथ ही साथ अन्तरतम (सबसे भीतरवाली) स्तरके मुखोंसे (orifices or gastric glands) पाचक रस (gastric juice) * निकलकर, उसे तर करता रहता है। इसीलिये खाया हुआ पदार्थ धीरे धीरे दबावके कारण पिसकर, उस का कुछ अंश पानी जैसा पतला हो जाता है और बाकी अंश भातके माड या काईकी तरहका आकार धारण कर लेता है। इस पतले अंशको पाकस्थलीके दूसरे स्तरकी सूक्ष्म सूक्ष्म रक्तवहा नाडियां सब चूसकर, रक्तमें परिणत कर देती हैं और फिर शरीरमें सब जगह फैला देती है। बाकी काईकी तरहके अंश (chyme) को और भी पतले अर्थात रक्तमें मिलजाने योग्य तैयार करनेके लिये "निर्गम द्वार" (pylorus) की राहसे आंतोंमें (intestine)

* पाचक रस (Gastric Juice) कड़वा खट्टे स्वादवाला (प्रतिक्रियामें कुछ खारा) एक प्रकारका तरल पदार्थ है। रोटी, मांस, पनीर वगैरह उद्भिद और जन्तुओंका सार भाग (proteid matters) इस पाचकरसके मिलनेपर सहजमें ही गल जाते हैं, परन्तु चर्बी और श्वेतसार (starchy) पदार्थों पर इसकी कोई क्रिया नहीं होती। Sp gr 1006 to 1010 जवान आदमियोंकी दोनों-ग्रन्थियों से (gastric glands) चौबीसों घण्टेमें कमसे कम चार पांचसेर (१० से १० पाउण्ड) पाचक रस निकला करता है।

में भेज दिया जाता है। इस निगम द्वारके मुँहपर एक दृढ "मांसपेशीसे बना कपाट" (spincter) लगा है। जब

२४ नं० चित्र।



पित्तकोष (Gall bladder)
पित्त प्रणाली (Bile duct)
अग्न्याशय-ग्रन्थि (Pancreatic duct)
आंत (Intestine)

निर्गम द्वार (Polypus)
अन्नवहानाली (Œsophogus)
उदर (Stomach)

पाचक ग्रन्थि (वृहत् अवस्थामें) Gastric gland
पाचक कोष (Gastric cells) उदरका आगम द्वार (Cardiac end
ग्रन्थि-कोष (Gland cells) of the stomach)
वृहत् अन्त्रकी नलाकार ग्रन्थि (Tubelar glands of the large intestine)

उदर-गह्वर और पित्त कोष खुला हुआ है, पाचक ग्रन्थियां विन्दु विन्दु अवस्थामें दिखाई देती हैं। कौड़ेकी तरह जो भाग है, वह रस-स्रावी ग्रन्थि है।

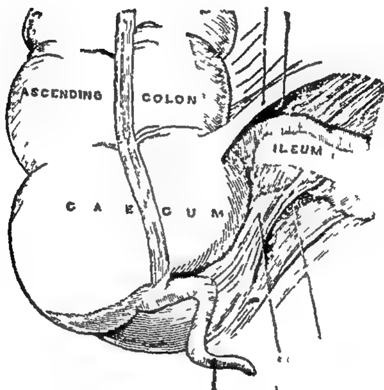
तक खाया हुआ पदार्थ अच्छी तरहसे पिसकर माड जैसा नहीं बन जाता तब तक यह मांससे बना कपाट (spincter) उसे किसी तरह भी पाकस्थलीसे निकलकर आँतोंमें जाने नहीं देता। बल्कि फिर पिसनेके लिये पाकस्थलीमें भेज देता है। अतएव, यदि खाया हुआ पदार्थ अच्छी तरह दांतोंसे न पीसा जाये और न चबाया जाये, और वह लार (saliva) मिलाकर पतला होनेके पहले ही पाकस्थलीमें ठेल दिया जाये तो पाकस्थलीको जितना काम करना चाहिये, उससे बहुत अधिक काम करना पडता है अर्थात उसे दांतका काम भी करना पडता है। इस तरह का अस्वाभाविक और बहुत ज्यादा काम बराबर करने के कारण पाकस्थली रोगी और निस्तेज हो पडती है। अतएव, उचित है कि मुँहमें खाये हुये पदार्थको जीभकी सहायता से दांतों-द्वारा अच्छी तरह चबाया जाये। मुँहमें छ लाला ग्रन्थियां (saliva glands) हैं। इन लाला ग्रन्थियोंसे लार (saliva) निकलकर मुँहको हमेशा तर रखती हैं और जिस समय भोजनके पदार्थ दाँतोंसे चबाये जाते हैं,

उस समय ये उसे तर किया करती है। मुंहके भीतरकी केशोंकी तरह सूक्ष्म और पतली रक्तवहा नाड़ियां खाये हुए पदार्थका अंश पतला होते ही उससे रक्तके उपयुक्त पदार्थ अपनी शक्तिके अनुसार चूसकर सारे शरीरमें मिला देती है। खाया हुआ पदार्थ मुंह छोड़कर गलनालीकी राहसे, जब पाकस्थलीमें चला जाता है, उस समय गलनाली की पतली रक्तवहानाड़ियां भी जितना सकती हैं उतना खाये हुए पदार्थके पतले या तरल अंशसे रक्तके लिये उपयोगी पदार्थ चूस लेती हैं। इसलिये, मुंहसे ही परिपाक क्रिया (हजम होना) आरम्भ हो जाता है। मुंह और "गलनाली (gullet)" जो पचा नहीं सकती है, वह पाक-स्थलीमें चला जाता है। और फिर पाकस्थली भी जिसे हजम नहीं कर सकती उसे आंतों में भेज देती है।

(ख) अन्त्र (आत—intestines)-अन्नवहानाली (alimentary canal) के निचले भागका नाम "आत या अँतड़ी (intestine or bowels) है। यह पाकस्थलीके नीचेकी ओर रहती है। यह एक टेढ़ा मेढ़ा लम्बा नल (tube) है। इस टेढ़े मेढ़े नलने कितनी ही बार घूमकर उदर गह्वरकी बहुत-सी जगह घेर रखी है। चलतूभाषासे इसे नला कहते हैं (entrails)। जवान आदमीकी आत प्राय: १८ हाथ लम्बी होती है। लम्बाई चौड़ाईके अनुसार यह दो भागों में विभक्त है। जैसे —(१) क्षुद्र अन्त्र (छोटी आंत) (२) वृहत् अन्त्र (बड़ी आंत) (८७ पृष्ट चित्र देखिये)।

(ग) क्षुद्र अन्त्र (small intestines)।—छोटी आंत लम्बाईमें लगभग चौदह हाथ या २० फीट होती है।

चित्र नं० २५।



ऊर्ध्वगामी बृहदन्त्र (Ascending Colon)
कट्यास्थि (Ileum) अन्त्रपुट (Caecum)

इसका व्यास एक इञ्चसे कुछ अधिक है। पाकस्थलीसे गये हुए भुक्त पदार्थका न पचा हुआ भाग इसी छोटी आंतमें प्रवेश करता है। पाकस्थलीकी तरह इस छोटी आंतके भी चार स्तर (coat) होते हैं। इसीलिये छोटी आंतकी क्रिया भी

पाकस्थलीको क्रियाकी तरह होती है। पचनेके समय इस आंतमें पित्तकोषसे, एक नलकी राह होकर पित्तरस (bile) और क्लोम-ग्रन्थि (pancreas) से एक दूसरे नल द्वारा क्लोम-रस (pancreatic juice) इसमें आकर मिल जाता है। इसके अलावा इस आंतसे एक प्रकारका रस निकला करता है, उसे अन्त्र-रस (intestinal juice or internal secretion) कहते हैं। खाये हुए पदार्थका वह अंश जो नहीं पचता है, पाकस्थलीसे आंतोंमें आनेके बाद, इन तीन रसोंमें मिलकर फिर घिसा करता है। इस तरह खाद्य पदार्थका सार सब पचकर रक्तमें परिणत हो जाता है और असार अंश सांपकी कुण्डली जैसी सम्पूर्ण आंतमें घूमता हुआ "मल (stool)" रूपमें बडी आंतमें भेज दिया जाता है। (पृष्ठका चित्र देखिये।)

(२) वृहत अन्त्र (large intestine) यह लम्बाईमें लगभग चार हाथके होती है, पर क्षुद्र अन्त्रसे यह बहुत मोटी होती है। छोटी आंतको बडी आंत प्राय घेरे रहती है। यह उदर-गह्वरके दाहिनी ओरके नीचेवाले स्थानसे आरम्भ होकर आंतकी रूपके नलका (tube) अन्तिम भाग छूती हुई, यकृत और पाकस्थलीके नीचेसे उदर-गह्वरके बाई ओर घूमकर गुह्यद्वारतक उतर गयी है। इसके तीन अंश हैं :—(१) ऊर्द्धगामी अन्त्र-भाग (ascending colon), (२) अनुप्रस्त अन्त्रभाग (transverse colon)

(३) अधोगामी अग्रभाग (descending colon)। (८६ पृष्ठ चित्र देखिये)।

इस बडी आंतमें खाये हुए पदार्थका असार अंश आकर इकट्ठा होता है और समय पाकर गुह्य द्वारकी राहसे "मल" (stool) के रूपमें बाहर निकल जाता है।

पहले ही कहा गया है कि हमारा शरीर प्रत्येक मुहूर्त्त पर क्षय होता है। और शरीरके जिस अंशका जो कुछ क्षय होता है यानी कमी पड जाती है, उसकी पूर्त्ति खून कर देता है। अब यह मालूम हुआ कि रससे रक्त उत्पन्न होता है और यह रस खाया हुआ पदार्थ पचकर पैदा होता है। अतएव, खाद्य-सामग्रीकी ओर हमलोगोंको विशेष दृष्टि रखना उचित है। खाद्य हमलोगोंको हमेशा पुष्टिकर और सहजमें पच जानेवाला भोजन करना बहुत जरूरी है इस अध्यायके अन्तमें खाद्यके सम्बन्धमें आलोचना की जायगी।

(ग) यकृत (liver) और पित्त कोष (gall bladder)। यकृत पिङ्गल रङ्गका एक खास यन्त्र है। यह उदर-गह्वरके दाहिनी ओर, ऊपरी भागमें ठीक "उदर वक्ष व्यवधायक पेशी (diaphragm)" के नीचे है। अन्त्रावरण झिल्ली (peritoneum) से ढका हुआ यह अपने स्थानपर सुरक्षित रहता है। यकृत शरीरकी सबसे प्रधान और बडी ग्रन्थि है, यह अनुमान १२ इञ्च लम्बी है, छ इञ्च चौडी और वजनमें प्राय. डेढ सेर है। इसके दो भाग है '—दाहिना और

बायां। प्रत्येक भागको "वर्तुलाग्र या खण्ड (lobe)" कहते हैं। बाँया खण्ड (lobe) की अपेक्षा दाहिना (lobe) उप खण्ड बड़ा है। प्रत्येक खण्ड (lobe) में फिर कितने ही खण्ड (lobules) मिले हैं। रक्तके अनावश्यक पदार्थोंसे यकृत एक तरहकी नीली आभा लिये तरल पदार्थ उत्पन्न करता है, इसको "पित्त (bile)" कहते हैं। यकृतके ऊपर एक थैलीमें यह पित्त भरा रहता है। इस थैलीको (store room of lobe) पित्तकोष (gall-bladder) कहते हैं। नित्य पित्तकोषोंसे (२४ घण्टेमें १६ से ३६ या २० से ४० आउन्स)—अन्दाजसे पित्त निकलकर आँतोंमें प्रवेश करता है और इस तरह पाचन क्रियामें सहायता पहुँचाता है।

(घ) प्लीहा (spleen)—प्लीहा उदर-गह्वरके बाईं ओर और पाकस्थलीके ठीक पीछे है। इसके शरीर का रङ्ग बैंगनी और आकार बैगके छत्तेकी तरह है। मुट्ठी बाँधनेपर, वह जितनी बड़ी दिखाई देती है, यह उतनी ही बड़ी है। यह वजनमें अन्दाजा १ पाव होगी। इसके द्वारा शरीरका कौन काम निकलता है, यह अबतक निश्चय नहीं हो सका। पर विज्ञानवेत्ता पण्डितोंका अनुमान है कि प्लीहा में रक्तकी कणिकाएँ बना करती हैं।

(ङ) क्लोमग्रन्थि (pancreas)।—क्लोम ग्रन्थि यकृतकी बनिस्बत छोटी होती है। यह प्लीहाके पास रहती

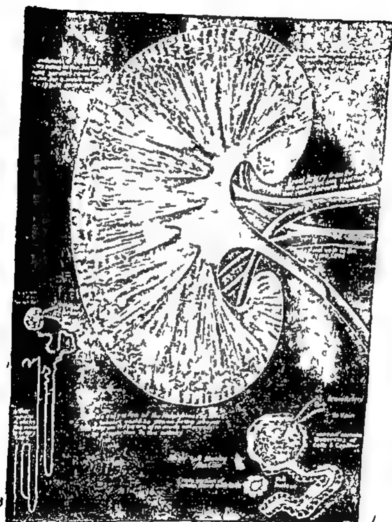
है। क्लोम-ग्रन्थि और प्लीहा, पाकस्थलीके पीछेकी ओर रहनेके कारण चित्रमें दिखाई नहीं देतीं। "क्लोमरस (pancreatic juice)" "क्लोम-ग्रन्थि (pancreas)" से निकलकर आँत में जाता है और वहां किस तरह पाचन-क्रियामें सहायता करता है, यह पहले ही बताया जा चुका है। यह जब नहीं होता तब बहुमूत्र रोग पैदा हो जाता है (Exterpation of pancreas followed diabetis)

मूत्र-यन्त्र अध्याय।

(च) मूत्र-ग्रन्थि (Kidney)।—आंत आदिके पीछे और मेरुदण्डके दोनो ओर अर्द्धचन्द्रके आकारकी पिङ्गल वर्णकी दो प्रधान ग्रन्थियां है।

इस दोनों ग्रन्थियोका नाम "मूत्र-ग्रन्थि या वृक्क—(मसाना kidneys) है।" यह कशेरुकाके प्रथम, कटि-प्रदेशमें (upper lumber vertebrae) रहती है (२२ न० चित्र)। खून साफ हो जानेबाद जो दूषित पदार्थ उसमें बचे रहते हैं, उन पदार्थो को संग्रहकर लाना ही तो दो मूत्र-ग्रन्थियोंका काम है। मूत्र ग्रन्थियोंमें रक्तसे छोड़ा हुआ दूषित पदार्थ इकट्ठा होनेबाद "मूत्र प्रणाली (ureter)" द्वारा वह "मूत्राशय" में भेजा जाया करता है।

चित्र नं० २६ ।

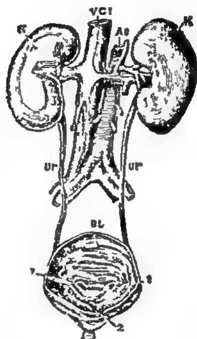


मसानेका कटा भाग —बांए कीड़े जैसा दिखाई देनेवाला भाग, मूत्र-उत्पन्नकारी और मूत्र वाही भाग है। यह जैसा दिखाया गया है, वैसा प्राकृतिक अवस्थामें होता है। दाहिने—मसानेकी एक कोषिका रक्तवाहिनी गुच्छ (Glomerules) है।

(छ) **मूत्राशय** (Bladder)।—मूत्राशय एक आधार (reservoir) स्वरूप थैली (bag) है। इसपर सिरस पैशिक और श्लैष्मिक त्वचाका आवरण रहता है। रक्तसे

चित्र न० २७।

१। मूत्र हमेशा मूत्र ग्रन्थिसे निकल कर मूत्राशयमें इकट्ठा होता है।



(1) The urine is secreted continually by the kidneys

K—मूत्र-ग्रन्थि (kidney), Ur—मूत्रनाली—Ureter, Bl,—मूत्राशय (bladder), 2, मूत्रमार्गका मूत्राशयमें खुलना—(opening of urethra in bladder) मूत्रप्रणालीका मूत्राशयमें खुलना—(opening of ureter in bladder)

त्यागा हुआ दूषित पदार्थ सब "मूत्र-ग्रन्थि दोनों (kidneys)" से "मूत्र-प्रणाली" (ureter) द्वारा मूत्राशयमें (bladder) आकार इकट्ठा हुआ करता है और "मूत्रमार्ग (urethra) से पेशाबके रूपमें निकल जाता है। चौबीस घण्टेमें स्वस्थ शरीरसे कमसे कम डेढ सेर पेशाब निकला करता है।

(२ से ३॥ पाउण्ड या ५२ आउन्स) स्वाभाविक पेशाबका रंग पानीकी तरह, कभी कभी पीली आभा लिये होता है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १०१२ से १०२० रहता है।

(ज) उपस्थ या जननेन्द्रिय (Sexual organs)।—इसके द्वारा ही जनन या सन्तान उत्पन्न होनेकी क्रिया हुआ करती है। यह यन्त्र न रहने पर या इस यन्त्रका परिचालन स्थगित रहने पर सृष्टि अबतक लोप हो जाती। बचपनमें यह पूरी तरह परिणत न होनेके कारण सोई हुई रहती है या इसका विकास नहीं होता है। यौवनमें यह पूरी तरह परिणत हो जाती है और इसका पूरा पूरा विकास भी हो जाता है तथा बुढ़ापा आनेपर यह क्रमश: क्षीण और निस्तेज हो पड़ती है। हमारी देहके दूसरे दूसरे यन्त्रोंकी तरह यह यन्त्र स्वतः सिद्ध या स्वत् सापेक्ष (self sufficient) नहीं है। पु० जननेन्द्रिय, स्त्री जननेन्द्रियका और स्त्री जननेन्द्रिय, पु० जननेन्द्रियकी मुखापेक्षी या अनुपूरक रहती है अर्थात जबतक एक दूसरेसे नहीं मिल जाती, तबतक जनन या सन्तानोत्पत्तिकी क्रिया नहीं होती। वास्तवमें जब ये दोनों यन्त्र मिलते हैं तब एक पूर्ण अवयव या सर्वाङ्ग विशिष्ट यन्त्रमें परिणत होते हैं और जब अलग हो जाते हैं, तब अर्द्धाङ्गकी तरह हो जाते हैं। पु० जननेन्द्रिय और स्त्री-जननेन्द्रिय देखनेमें एक तरहकी नहीं होती। इसी लिये, इनका अलग अलग वर्णन किया गया है।

———

पुं० जननेन्द्रिय ।

(Male organs of generation)

पुं० जननेन्द्रिय दो भागमें विभक्त है। जैसे :—(१ शिश्न—लिङ्ग, (penis) और (२) मुष्क (testis २८ नं० चित्र ।

चित्र नं० २८ ।



पुं जननेन्द्रियका सीधी काट—१ त्रिकास्थि Sacrum २, मूत्राशय Urin bladder,

१ । शिश्न (Penis) ।

शिश्न या लिङ्गसे ही सङ्गमकी क्रिया होती है। स्वाभाविक अवस्थामें जब यह शिथिल रहता है, तब इसका आकार गोल डण्डेकी तरह होता है। पर जब कामोत्तेजना होती है, तब यह उठनेवाले उत्थानशील तन्तुमय पदार्थसे कड़ा हो जाता है। यह तीन लम्बे नलों द्वारा (Three cylinderical bodies) द्वारा शिश्न बना है। इसमें दो नल लम्बे लम्बे दोनों ओर है। इन दोनों को "पार्श्वकचाङ्ग (corpora cavernosa) कहते हैं। तीसरा नल ऊपर कहे दोनों नलोंके बीचमें और नीचेकी ओर है। इस नलका नाम "निम्नस्थ मध्य कचाङ्ग (Corpus Spongiosum)" है। मूत्रमार्गका अधिक अंश इसीमें छिपा हुआ है। ये दोनों नल अलग होनेपर भी आपसमें मिले हुए हैं। अर्थात दोनोंका शरीर आपसमें लगा हुआ है। दोनों पार्श्व कचाङ्ग (Corpora Cavernosa) वस्ति गह्वरसे आगे जाकर शिश्नके बीचवाले भागमें मिलकर समाप्त हो गये है। निम्न कचाङ्ग भी साथ ही साथ आकर ऊपर कहे दोनों नलोंसे मिल तो गया है, परन्तु वहीं समाप्त न होकर और भी कुछ आगे बढ़ गया है और लिङ्गमुण्डमें जाकर मिल गया है।

लिङ्ग (शिश्न) को चार भागोंमें विभक्त किया जा सकता है। जैसे.—(१) लिङ्गमूल (root) (२) लिङ्ग-

देह (body), (३) लिङ्गग्रीवा (neck cervix) और (४) लिङ्गमुण्ड (glans penis) ।

(१) **लिङ्गमूल** (root)।—शिश्नका जो अंश वस्तिगह्वरमें "बन्धनी-जाल (ligaments)" द्वारा "वच-णास्थि (ischio pubio rami)" और विटप उपास्थियोंसे (symphysis pubis) मिला हुआ है, उस अंशको "लिङ्ग मूल या लिङ्गपीठ" (root) कहते हैं। यौवन कालमें लिङ्गपीठको त्वचाका ऊपरी भाग केशसे ढका रहता है। इसी स्थानका नाम "मणिपुट या विटप" (pubis) है।

(२) **लिङ्ग-देह** (body)।—पहले ही कहा गया है, कि भीतरी तीनों नल शिश्नके दूसरे आधे भागमें मिल गये है। अब लिङ्गमूलसे लेकर, तीनो नलोंके सन्धि-स्थान-तकके अंशको लिङ्गदेह (body) कहा जाता है।

(३) **लिङ्ग-ग्रीवा** (neck or cervix)।—और लिङ्गदेह "लिङ्गमुण्डके (glans penis) बीचके गढहेकी तरह अंशका नाम लिङ्गग्रीवा (neck or cervix) है।

(४) **लिङ्गमुण्ड** (*glans penis*)।—*शिश्नके* अगले भागको "लिङ्गमुण्ड" कहते है। इसका आकार बहुत कुछ सुपारीकी तरह होता है। इसके सामनेवाले भागका छेद मूत्र द्वार (Meatus urinarious) कहलाता है।

शिश्नकी वहिस्त्वचा (integnment) या बाहरी त्वचा बहुत कोमल और पतली होती है। इसका अग्र भाग

अर्थात मुण्डावरक (prepuce) द्विभाजित (doubled)— दोहराया हुआ रहता है और इतने अलग भावसे बैठाया रहता है, कि लिङ्गमें कडापन आते ही उसका बहुत सा भाग लिङ्ग मुण्डपरसे हट जाता है और लिङ्गमुण्डका बहुतसा हिस्सा उसमेंसे बाहर निकल आता है।

शरीरके और और अङ्गोंकी तरह शिश्न भी छोटी छोटी शिराएँ, धमनियाँ और कैशिका नाडियों (capillaries) से भरा हुआ है। इस स्थानको छोटी छोटी शिराओंमें बहुत अधिक रक्त प्रवाहित होता है। ये छोटी शिराएँ एक बडी शिरामें बदलकर शिश्नकी पिछले भागमें लम्बे लम्ब रहती है।

शिश्नमें तीन ग्रन्थियाँ है। एकसे लिङ्गकी गर्दन घिरी हुई है। इसका आकार बादामकी तरह है। इसका नाम "पश्चात् ग्रन्थि या मूत्रशायी ग्रन्थि (prostate gland)" है। इससे एक तरहका रस निकला करता है और दो ग्रन्थियाँ मटरकी तरह छोटी है। ये दोनो ग्रन्थियाँ मूत्रमार्गके दोनों ओर लिङ्गमूलके कुछ पीछे है। इन दोनों ग्रन्थियोंसे एक तरहका रस निकला करता है। इन दोनो ग्रन्थियोंका नाम "मटर-ग्रन्थि (cowpers gland)" है।

(२) मुष्क (Testes)।

मुष्क दो है। इनका आकार अण्डेको तरह है। इसी लिये, इसका दूसरा नाम "अण्ड" भी है। ये दोनों अण्ड भी

पु'०-जननेन्द्रियके प्रधान यन्त्र है। इनसे ही शुक्र उत्पन्न हुआ करता है। बच्चा जब माताके गर्भमें रहता है, उस समय पहले पाँच महीनेतक दोनो अण्ड (testes) वस्तिगह्वरमें रहते है। इसके बाद ये धीरे धीरे उतरा करते है। आठवे महीनेमें, अर्थात शिशु पैदा होनेके कुछ पहले दोनो अण्ड (testes) पूरी तरह "अण्डकोष (scrotum)" मे उतर आते है। अण्डकोष (scrotum) दो स्तरोंसे बनी एक विशेष प्रकारकी थैली है। यह विटप देश (pubes) के नीचे लिङ्गमूलसे लगी हुई झूलती रहती है। एक पदार्थसे यह दो भागोमें बँट जाती है। इसके प्रत्येक भाग या कोषमें एक एक अण्ड (testes) बहुत सुरक्षित भावसे रहता है। एक एक अण्डमें छ' सातके हिसाबसे आवरक झिल्ली है। यह अण्ड या दोनो मुष्क (testes) दो शुक्ररज्जु (spermatic cord) * द्वारा अण्डमें दोनो ओर झूलते रहते है। प्रत्येक अण्ड या मुष्क लम्बाईमें प्राय' डेढ इञ्च और मोटाईमें प्राय. एक इञ्च होगा। मुष्क या अण्ड (testes) सौत्रिक तन्तुसे बनी एक गाँठ या थैली है। सौत्रिक झिल्ली द्वारा प्रत्येक मुष्कके बहुतसे कोटर बन गये है। इनमें प्रत्येक कोटरमें शुक्रकोष रहता है। एक एक मुष्कमें शुक्रकोषकी सख्या प्राय तीन चार सौ होगी। प्रत्येक शुक्र-

* शुक्र रज्जु (Spermatic Cord) स्नायु धमनी शिरा और छोटी छोटी प्रणालियोंकी समष्टि भर है। हरेक शुक्र-रज्जु लगभग तीन चार इञ्च लम्बा होता है। दाहिनी ओरकी रज्जुकी अपेक्षा बाई ओरका रज्जु अधिक लम्बा होता है।

दो नालियाँ (ducts) शुक्र नाली (vas deferens) साथ मिलकर "शुक्र निकलनेकी दोनों नालियाँ (शुक्र-स ejaculatory ducts) बन जाती है। इसकी लम्बाई इञ्चसे कुछ कम रहती है। यह शुक्र निकालनेवाली दो नालियाँ (ejaculatory ducts) दोनों ओरसे आ शिश्नकी जड़में "मूत्रमार्ग" में (Urethra) में खुल जाती हैं पहलेही कहा गया है, कि "मुखशायी ग्रन्थि (prosta gland)" और "मटर ग्रन्थियाँ दोनों" (Cowpers gland मूत्राशयके नीचे हैं। इन तीनों ग्रन्थियोंकी निर्गम प्रणा भी मूत्रमार्गमें (urethra) खुल गयी है।

स्त्री-जननेन्द्रिय।

(Female Organs of Generation)

स्त्री-जननेन्द्रिय तीन भागोंमें विभक्त है। जैसे :—(१ वहिरङ्ग (२) अन्तरङ्ग (३) उपाङ्ग या स्तन।

(१) वहिरङ्ग या भग (Vulva or pudendum)।

(क) कामाद्रि (Mons Veneris), (ख) वृहत भगो दोनों (labia majora) (ग) क्षुद्र भगोष्ठ दोनों (labi minora) (घ) भगाङ्कुर (clitoris) और योनिद्वा (orifice of vagina)—इनसे वहिरङ्ग या भग (vulv or prudenda) बनता है (२८ नं० चित्र)

चित्र न० २८।



बाह्य जननेन्द्रिय।

(११) कामाद्रि (Mons veneris), ([illegible]) भगाङ्कुर का आवरण (Covering of clitoris) ([illegible]) भगाङ्कुर (Clitoris) ([illegible]) [illegible]

भगोष्ठ (Labia minora) (९) वृहत् भगोष्ठ (Labia majora) (५) योनिच्छद (Hymen) (१०) वृहत् भगोष्ठ सन्धि (Fourchette) (११) मूत्रनालीकी बहिर्द्वार (Opening of urethra) (६) योनि द्वार, (Orifice of vagina) (११) मलद्वार (Anus)।

(क) कामाद्रि (Mons veneris)।—लिङ्गका ऊपरी भाग और वस्ति-गह्वर (Pelvic) त्रिटप (or pubis) के ठीक सामनेकी ओर जो ऊँचा मेद भरा अंश है, उसीको "कामाद्रि" (mons veneris) कहते हैं। जवानी में यह स्थान रोएँसे भरा रहता है।

औरतोंमें कामाद्रि (mons veneris), ठीक पुरुषोंकी लिङ्ग पीठ (pubes) की तरह ही होता है।

(ख) वृहत् भगोष्ठ दोनों (labia majora) जो सुकोमल, उठा हुआ, तिकोनियाँ दो चमड़ा कामाद्रि (mons veneris) के दोनों ओरसे मलद्वार (anus) के सामनेवाले भाग (perineum) तक फैला हुआ है, वे दोनों चर्म "वृहत् भगोष्ठ (labia majora)" कहलाते हैं। इसकी लम्बाई प्रायः तीन इञ्च होगी। कामाद्रिमें इन दोनों ओष्ठोंका जो मिलन-स्थान है, उसका नाम ऊर्द्ध-सन्धि (anterior commissure) है और मलद्वारसे एक इञ्च हटकर इसका जो मिलन-स्थान है, उसका नाम "निम्न-सन्धि (posterior commissure)" है। इन दोनों भगोष्ठोंका निचला सन्धि स्थान अपेक्षाकृत क्षीण और सूक्ष्म हुआ करता

है। जवानी आजानेपर दोनों भगोष्ठोंका ऊपरी भाग केशों से ढक जाता है और इसका भीतरी भाग श्लैष्मिक झिल्ली से भरा रहता है।

औरतोंके "दोनो बृहत् भगोष्ठ (labia majora)" ठीक पुरुषों के दोनों अण्डकोषों की तरह है।

(ग) क्षुद्र भगोष्ठ दोनों (labia minora)। दोनों बृहत् भगोष्ठों के भीतर जो दो कोमल श्लैष्मिक झिल्ली भरी त्वचा है, उन्हीं दोनों चर्मोंका नाम "क्षुद्र भगोष्ठ या भगपक्ष (labia minora or nymphae)" है। इसकी लम्बाई प्राय डेढ इञ्च होगी। ये दोनों ओठ सामनेवाले भागमें मिले हुए हैं, परन्तु पीछेकी ओर ये दोनों बृहत् भगोष्ठके साथ एकदम मिल गये हैं। इन क्षुद्र "दोनों भगोष्ठ (labia minora)" द्वारा ही भगाङ्कुर (clitoris) घिरा हुआ है।

(घ) भगाङ्कुर (Clitoris)।—यह स्त्रियों की इन्द्रिय-तृप्तिका प्रधान साधन और यन्त्र है। इसकी लम्बाई प्राय डेढ इञ्च होती है और इसकी आकृति बहुत कुछ बडी इलायचीकी तरह होती है। "उत्थानशील (उठनेवाली) तन्तुओं (erectile tissues)" द्वारा यह बना हुआ है। इसीलिये कामकी उत्तेजना होनेपर यह कडा हो जाता है। इसमें बहुत ज्यादा परिमाणमें स्नायु रहनेके कारण इसमें बहुत ही अधिक चेतना होती है। यह दोनों बृहत्

(labia majora) की ऊपरी सन्धि (anterior commissures) के नीचेवाले स्थानमें है और यह भगपक्ष (nymphae)" से ढका और घिरा हुआ भी है। इसी लिये, बाहरसे कांटेकी तरह इसका केवल बाहरी "मुण्ड" (glans clitoridis) दिखाई देता है। औरतो का भगाङ्कुर (clitoris) पुरुषके "शिश्न (penis)" की तरह ही होता है। फर्क इतना ही है कि "भगाङ्कुर (clitoris)" में "मूत्रमार्ग" (urethra) छिपा नही है।

स्त्री-मूत्रमार्ग (female urethra)।—भगाङ्कुर-से प्राय डेढ इञ्च नीचे रहता है। स्त्री-मूत्र-मार्गका द्वार (meatus urinarius) दोनों भगोष्ठोंके बीचमें और भगाङ्करके एक इञ्च नीचे रहता है। इसका व्यास अन्दाजन चौथाई इञ्च होगा।

(ङ) **योनिद्वार** (orifice of vagina)।—मूत्रमार्गके (urethra) के निचले भागमें ही "योनिद्वार" (orifice of vagina) आरम्भ होता है। यह ५।६ इञ्च लम्बा होता है। इसका निचला अंश प्राय एक श्लैष्मिक झिल्लीसे ढका रहता है। इस श्लैष्मिक झिल्लीकी आकृति किसीकी अर्द्धचन्द्रकी तरह और किसी किसीकी अंगुलीकी तरह गोल आकारकी हुआ करती है। इस झिल्लीका नाम **सतीच्छद** या **कुमारीच्छद** (hymen) है। पहले यह धारणा थी, कि कुमारी अवस्थामें यह छेद जुड़ा हुआ रहता

है और पुरुषका संसर्ग होनेसे ही टूटता है। पर यह धारणा एकदम ठीक, नहीं है। क्योंकि बहुतसी अविवाहिताओंमें यह छद बिलकुल ही दिखाई नहीं देता। इसके अलावा समझके बाद भी किसी किसीको यह छद ज्यों का त्यों रहता है। अतएव, यह सतीत्वका प्रमाण स्वरूप नहीं माना जा सकता।

(२) अन्तरङ्ग।

(क) योनि (vagina), (ख) जरायु (uterus), (ग) दोनों डिम्बकोष (ovaries)—इनसे ही स्त्री-जननेन्द्रियका अन्तरङ्ग भाग बनता है (२८ नं० चित्र)।

(क) योनि (vagina)—यह चोंगाकी तरह टेढा होकर जानेवाला एक खास तरहका नल है। यह "जरायु (uterus)" से निकलकर वस्तिगह्वरके भीतर होता होता हुआ वृहत्भगोष्ठ दोनों (labia majora) में खुल गया है। इसके सामनेवाले भागमें मूत्राशय और पिछले भागमें मलाधार है। इसकी लम्बाई प्राय पाँच छ इञ्च है। इसका भीतरी भाग श्लैष्मिक झिल्लीसे ढका हुआ है और इसके ऊपरका आवरण मांस पेशियोंसे बना हुआ है। भगोष्ठके पास योनिपथ पतला होगया है, पर यह जितना ही जरायुके पास होता जाता है उतना ही चौडा होता जाता है। योनिमुख हमेशा सिकुडा हुआ रहता है

उसकी दीवारें आपसमें मिली रहती हैं। परन्तु योनि

२८ नं० चित्र।



२। मलनाली (Rectum) ८। क्षुद्र भगोष्ठ (Labia minora) ९। बृहत् भगोष्ठ (Labia majora) ४। जरायु (Uterus) १६। कटि-कशेरुका (Lumber vertebra) ७। त्रिकचञ्चू अस्थि (Coccyx) ६। त्रिकास्थिकी कशेरुका (Vertebras of Sacrum) ५। मलाशय जरायु-प्रणाली (Retro uterine excavation) ११। योनिपथ (Vagi- १८। जरायु मूत्राशय प्रणाली (Uterovesical excavation) C जरायु (Cervix of the uterus) D जरायु शिखर (Fu

उत्थानशील तन्तुओंसे (erectile tissues) से बनी है। इसीलिये काफी परिमाणमें फैल सकती है। गर्भवके समय यह बहुत फैल जाया करती है।

(ख) **जरायु** (uterus)—इसका आकार बहुत कुछ नीचे मुँह किये घड़े अथवा अमरूद या नाशपाती फलको तरह होता है। यह एक ऐसी थैली है, जिसका भीतरी भाग खोखला रहता है। इसकी लम्बाई ३ इञ्च, चौड़ाई २ इञ्च और मोटाई १ इञ्च होगी। निचला अंश आध इञ्च। यह वस्तिगह्वरमें योनिसे लगी हुई है। इसके सामने "मूत्राशय" और पीछे "मलाधार" है। जरायुका भीतरी भाग तिकोनियाँ होता है। चलतू भाषामें इसे गर्भाशय कहते हैं। इस जरायु का प्रधान काम है, भ्रूण या गर्भको धारण करना। यह भी बहुत फैलनेवाला होता है। भ्रूणके बढ़नेके साथ ही साथ इसका भी फैलाव बढ़ता जाता है और धीरे धीरे बड़ा होकर यह वस्तिगह्वर छोड़कर ऊपरी उदरके अधिकांश स्थानमें फैल जाता है। प्रसवके बाद यह फिर अपनी पूर्वकी अवस्थामें आ जाता है। जरायु गोल आकारमें और लम्बे भावसे तथा पेशियोंसे बना हुआ एक यन्त्र है। इसके सिकुड़नेके ही कारण प्रसवके बादका (after pains) या प्रसवान्तिक वेदना पैदा होती है और यही प्रसव क्रिया (सन्तान पैदा होनेके काम) का मूल कारण है। जरायु तीन स्तरोंसे बना हुआ है। पहला या बाहरी स्तर "श्लैष्मिक झिल्ली (Serous membrane)" से बना हुआ है। दूसरा या मध्य स्तर "मांस-

नहीं देते। ये सब डिम्बाणु (ovum) पककर जब ऊपर कहे रसके साथ डिम्बकोषसे निकल पडते हैं, उस समय औरत रजस्वला (menstruation) हो जाती है।

ऋतु वगैरहके सम्बन्धमे यहां लिखे हुए विषय समझ रखने योग्य हैं :—

जब पहले पहल ऋतुस्राव हो तो समझना चाहिये कि स्त्री अपने जीवनके किशोर और यौवनकी बीचवाली सीमापर आ गयी है। साधारणत सम शीतोष्ण-प्रधान देशोमें कुमारियाँ १४ से १६ वर्षके बीचमें ऋतुमती होती हैं। भिन्न भिन्न कारणोसे इसमें व्यतिक्रम हो जाता है। गर्भावस्थामें और वय सन्धिकालमें (प्राय ४५ वर्षकेबाद) ऋतु होना बन्द हो जाता है। प्राय' २८ दिनके बाद ऋतु होता है और ३—५ दिनो तक होता है। उसका परिमाण ४ से ५ आउन्स तक होता है। यह यौवन कुसुम अच्छी तरह विकसित होनेपर बहुत सावधानतासे आहार-विहार करना आवश्यक है। इस समय युवतियो को शारीरिक बल और दृढता बढ जाती है और सन्तानको गर्भमें धारण करनेको शक्ति पैदा हो जाती है। इस उम्रमें आलस्यमें जो स्त्रियाँ अपने दिन काटती हैं या नाटक उपन्यास पढने और देखनेमें अपना स्वास्थ्य नष्ट कर डालती हैं, वे हमेशा तकलीफ उठाती है। विलासिता पुत्र-हीनताका अन्यतम कारण है।

स्त्रियोंका डिम्बकोष दोनों (ovaria) पुरुषोंके दोनों मुष्क (testes) की तरह हैं।

(घ) दोनों कामलनल (fallopian tubes) कामल नल दो हैं। ये दोनों कामलनल जरायुके ऊपरी भागमें, दोनो ओरसे दोनो ओरके डिम्बकोष (ovaria) तक फैले हुए हैं। इनकी लम्बाई प्राय चार इञ्च रहती है। इसका एक सिरा जरायु गर्भमें और दूसरा सिरा डिम्बकोषके पास वस्तिगह्वरमें चला गया है। हरेक नलका आखिरी भाग डिम्बकोषके पास झालरदार फूलकी तरह दिखाई देता है। इन दोनो कामलनल (fallopian tubes) से दोनों डिम्बकोषसे (ovaria) से निकले हुए डिम्बाणु (ovum) जरायुमें लाये जाते हैं। स्त्री वीर्य जिस तरह दोनों कामलनलके द्वारा जरायुमें जाता है, संगमके समय पुरुष-वीर्य भी उसी तरह योनि पथके द्वारा जरायुमें ले जाया जाता है। स्त्रीके परिपक्व डिम्बाणुसे पुरुषके तेज-वान शुक्रकीटके इस तरह मिल जानेसे जरायु (uterus) में भ्रूण की उत्पत्ति हुआ करती है। (२८ नं० चित्र देखिये)

(२) उपाङ्ग या स्तन (Mammae or breasts) स्तनकी आकृति बड़ी और थुलथुली सूखी और झूलती हुई होती है। स्तनमें मेद अधिक रहता है और स्तन कोष-सब (gland tissue) बढ़े रहते हैं—इन्हीं दोनो कारणोंसे स्तन बड़े और थुलथुल मालूम होते हैं। यदि ...

कारण बढ़ गया हो तो स्तन दबानेसे गोलियों जैसे पदार्थ मालूम होते है। गर्भ रह जानेपर स्तनकोष इसी तरह बढ जाते है। स्तनकी त्वचा फट जानेकी वजहसे (crack) दाग और स्तन वृन्तके चारो ओर काला घेरा दिखाई देता है। ऐसा दिखाई देनेपर समझना चाहिये कि गर्भ रह गया है। जननेन्द्रियके साथ दोनो स्तनोंका इतना घनिष्ट सम्बन्ध है, कि उन्हें यदि जननेन्द्रियके अन्तर्गत कहा जाये तो भी कोई अत्युक्ति नही, स्त्रियोको यौवन आनेपर दोनो स्तन भी जननेन्द्रियके साथ ही साथ पुष्ट हो जाते है और सन्तान होने पर उनमें दूध पैदा हो जाता है। छातीमें दोनो ओर दो स्तन है प्रत्येक स्तनके अगले भागमें जो उठा हुआ वृन्त की तरह मासपिण्ड है, उसका नाम चुचुक (nipple) या स्तन वृन्त है। प्रत्येक स्तनवृन्त एक गोल चमडेसे घिरा हुआ है। इस चक्र जैसे चर्मके टुकडेका नाम कृष्णमण्डल (areola) है। स्त्रियोंको सन्तान होनेके पहले "चुचुक (nipple) और कृष्णमण्डल" (areola) का रङ्ग लाल रहता है। परन्तु गर्भ रह जानेके बाद इसका रङ्ग हमेशाके लिये काला हो जाता है। मेद तथा दुग्ध-स्रावी ग्रन्थियो से भरे रहनेके कारण औरतोंके स्तन इतने कोमल होते है।

जीवका जन्म (Birth) या **गर्भाधान** (Fertilization and Conception)। स्त्री डिम्ब (ovum) जिस तरह डिम्बकोषमें रहता है, पुरुष वीर्य या रेत (Semen) भी उसी तरह मुष्कमें रहता है।

गर्भाधान।

पुरुष-वीर्य या शुक्रकीट (Spermatozoa) और स्त्रियोंका परिपक्व डिम्ब जब सहवासके अन्तमें मिल जाता है, उसी समय गर्भ रहता है। विधिकी आश्चर्य-जनक गतिसे कभी कभी गर्भाशयके बाहर भी गर्भधारण हो जाता है, इसको अस्थानमें अस्वाभाविक गर्भ-सञ्चार (Extra-uterine-pregnancy) कहते हैं, और एक ही गर्भमें एकसे अधिक या बहुत तरहकी भ्रूणकी उत्पत्ति हुआ करती है (Multiple pregnancy, triplets, hybrids)।

गर्भ-विज्ञान।

पुरुष शुक्र (Spermatozoa) और स्त्री डिम्ब (Ovum) के संयोगसे ही डिम्ब-प्रणाली (Fallopion tubes) में गर्भाधान हुआ करता है। कभी कभी यह गर्भाशयमें भी होता है। शुक्राणुका माथा और डिम्बकी मींगी आपसमें मिल जाती है और शुक्रकीटके सिरको छोड़कर बाकी भाग डिम्बके शरीर भागमें मिल जाता है। इस तरह दोनों के सम्मिलनसे जो एक सेल तैयार होता है, वह गर्भ-सेल या भ्रूण-सेल (Zygote) है और इस भ्रूण-सेलमें जो परिवर्त्तन होता है, उसे विभाग (segmentation) कहते हैं।

अब यह भ्रण्-सेल बहुत तेजीसे डिम्ब-प्रणालीसे गर्भाशयमें जाकर वहां श्लैष्मिक झिल्लीमें चिपक जाती है। इसके बाद भ्रूण-सेल बीचसे फटकर दो, फिर दो से चार, चारसे आठ इसी तरह लगातार फटती जाती है और फटते फटते एक छोटासा गोल सेलोंका समूह-सा बन जाता है। इसे कलल (Morula) कहते हैं। कललके भीतरी भागकी सेलें कुछ छोटी होती हैं, बाहरकी कुछ बडी। बाहरकी सेल भीतरी सेलोंके चारो ओर एक वेस्ट सा बनाती हैं। इस कललमें फिर एक खोखला स्थान बन जाता है, जिसमें एक तरहका तरल पदार्थ इकट्ठा होने लगता है। इसकी दबावसे बाहरकी सेले भीतरी सेलोंसे अलग हट जाती हैं। गर्भकी यह अवस्था गर्भ-बुदबुद (Blastocyst) कहलाती है। इसी बुदबुदके भीतर जो सेलोंका समूह रहता है, उससे गर्भका मस्तक तथा मस्तकको ढकने वाली झिल्लीका कुछ भाग बनता है।

गर्भाशयमे परिवर्त्तन।—गर्भ-धारण करनेके बाद गर्भाशयकी श्लैष्मिक झिल्ली मोटी होने लगती है और उस को नलके आकारवाली ग्रन्थियाँ अधिक लम्बी हो जाती हैं। श्लैष्मिक झिल्ली भ्रूणको चारो ओरसे ढँक लेती है। अर्थात भ्रूणके चारो ओर श्लैष्मिक कलाका एक आवरण या वेस्ट बन जाता है। इस अवस्थामें आकर गर्भाशयकी झिल्ली गर्भ-काला (Decidua) कहलाती है। भ्रूण धीरे धीरे बडा होता है। इस अवस्थामें उसपर सेलो तथा सौत्रिक

तन्तुओंके दो आवरण चढ़ जाते हैं। एक आवरण बाहर रहता है, यह गर्भकलासे मिला रहता है। इसे भ्रूणका बाह्यावरण (Chorion) कहते हैं। दूसरा आवरण भीतर रहता है, यह भ्रूणका अन्तरावरण (Mesoblast) कहलाता है।

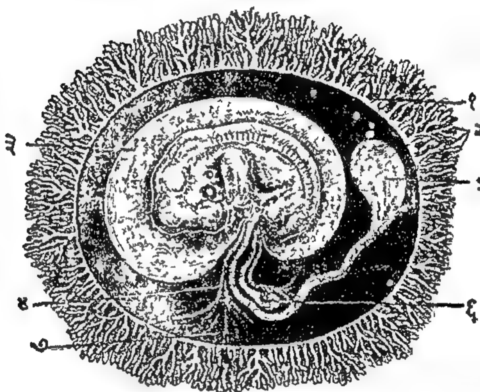
कुछ दिन बाद बाहरी आवरणपर, जब वह कुछ मोटा हो जाता है, तब उसके बाहरी पृष्ठपर बहुसे छोटे छोटे जैसोंकी तरह अकुर निकल आते हैं। इन अकुरोंसे ही भ्रूणका पोषण होता है।

इस अवस्थामें भ्रूण गर्भाशयकी एक दीवारसे चिपका रहता है। जहाँ भ्रूण रहता है, उस स्थानके बाह्या-वरण के अकुर कुछ घने रहते हैं। बाकी स्थानोंके छोटे तथा बहुत कम होते हैं। दो महीने बाद तो और स्थानोंमें अकुर बनते ही नहीं और जो बन गये थे, वे भी धीरे धीरे गायब हो जाते हैं। इस स्थानपर छोटे छोटे गढ्ढे या आशय बनते हैं। इनमें रक्त भरा रहता है और इन्हीं रक्त-भरे गड्ढोंमें वे बाहरी आवरण डूबे रहते हैं।

जब भ्रूण चार या पाँच सप्ताहका हो जाता है तो भ्रूण और उसके भीतरी आवरणके बीचमें एक तरहका तरल पदार्थ इकट्ठा होने लगता है। इसको गर्भोदक (Liquor amni) कहते हैं। इस गर्भोदकका दबाव इतना अधिक होता है कि बाह्यावरण और अन्तरावरण एक हो जाते हैं। ६-७ महीने तक गर्भोदककी मात्रा लगातार बढ़ा करती है और नवाँ

महीना आते आते लगभग सेर सवा-सेर गर्भोदक (Liquor amnii) इकट्ठा हो जाता है। यह गर्भोदक गर्भ-रक्षाका एक

चित्र नं० ३१।



छः सप्ताहका गर्भ।

१। भ्रूण बाह्यावरण (Chorion). २। अंकुर (Fibre)
३। भ्रूण अन्तरावरण (Mesoblast) ४। नाल (Placenta)
५। थैली इसमें पोषक पदार्थ रहते हैं।
६। नाभिपुट। ७। कमल बननेका स्थान।

प्रधान उपादान है। इस समय गर्भकलामें भी दो प्रकार हो जाते हैं। पहले ऊपरका अंश बाकी अंशसे अलग रहता है।

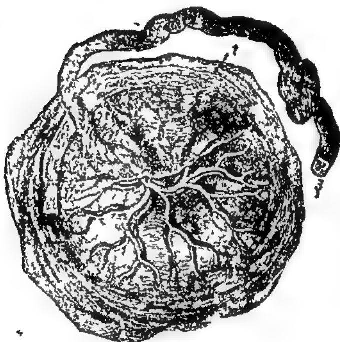
अतएव, गर्भाशयमें गर्भ तथा उसकी दीवारोंमें अन्तर रहता है। पर जब भ्रूण बढ़ जाता है, तो ऊपरकी गर्भकला वाली गर्भकलाके पास जा पहुंचती है। तीन मासका गर्भ होने पर दोनों आपसमें मिल जाती हैं। गर्भोटकके दबावसे गर्भकला पतली हो जाती है। गर्भाशयका मुंह तो सारा बन्द हो जाता है और कोई भी बाहरी पदार्थ उसमें प्रवेश नहीं कर पाता।

नाल।—यह डोरी जैसी एक चीज है। भ्रूण इसीके सहारे गर्भाशयकी दीवारसे लटकता रहता है। इसे नाभिनाल (Umbilical cord) भी कहते हैं। नाल एक ओर भ्रूणकी नाभीसे सम्मिलित रहता है और दूसरी ओर कमलसे। वास्तवमें नाल कई नालियाँ पास पास रहनेसे बन जाता है। इसमें मुख्य चीज होती है, दो धमनियाँ और एक शिरा तथा और भी कई पदार्थ इसमें होते हैं। ये सब एक लसदार पदार्थसे आपसमें मिले रहते हैं और इस पर एक अन्तरावरण चढ़ा रहता है। इसकी लम्बाई भ्रूण की लम्बाईकी तरह ही होती है, कभी छोटी या बड़ी भी। रक्तवाहिनियाँ कमलमें पहुंचकर कई शाखाओंमें विभक्त हो जाती हैं।

कमल।—(Placenta) जिस स्थान पर नालके सहारे भ्रूण गर्भाशयसे लटका रहता है, वह कमल कहलाता है। यह कमल गर्भकलासे चिपका रहता है। कमलमें

ऐसे बहुतसे स्थान होते है, जो रक्तसे भरे रहते हैं। इनमें वाह्यावरणके अङ्कुर डूबे रहते हैं और उन अङ्कुरोंमें छोटी छोटी रक्तवाहिनिया रहती हैं।

चित्र न० ३२।



कमल।

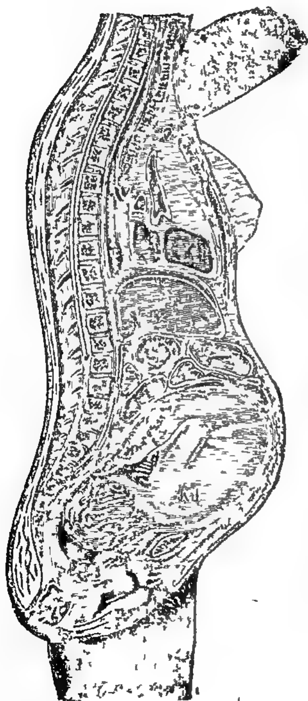
१। परिस्रवका भ्रूण तल (Back of placenta)
२। भ्रूण अन्तरावरण (Mesoblast)
३। रक्तवाहिनियां (Blood vessels)
४। नाल (Umbilical cord)

गर्भाशयमें यह कमल ऊपरकी ओर या उसकी अगली अथवा पिछली दीवारमें बनता है।

कमलके कार्य।—(Functions of Placenta) यही वह चीज है जिसके द्वारा भ्रूण माताके शरीरसे सञ्चालित रहता है। इसके द्वारा ही भ्रूणका पोषण होता है। साथ ही यह भ्रूणके श्वासप्रश्वास क्रियाका साधन बना रहता है। अर्थात कमल भ्रूणका श्वासोच्छ्वास यंत्र है। साथ ही इसीके द्वारा भ्रूण अपने शरीरके मलिन पदार्थों को त्यागता है अर्थात कमल रक्तशोधक-यन्त्रका भी काम देता है।

गर्भाशयमें भ्रूणका पोषण।—जब तक भ्रूण चार सप्ताहका रहता है, तब तक उसके बाह्यावरणमें रक्त-वाहिनियां नहीं होती। उस समय तक भ्रूण आवश्यक पदार्थों को गर्भाशयकी श्लैष्मिक-झिल्ली और जरायुसे ही चूस चूस कर गर्भाशयकी श्लैष्मिक कलाके रक्त आदिसे अपना पोषण करता है। चौथे सप्ताहके बाद गर्भकलामें कई रक्त से बने गड्ढे बनते हैं और साथ ही बाह्यावरणमें कितनी ही रक्तवाहिनी नालियां भी बनने लगती हैं। अब रक्त वाहिनियों द्वारा पोषक पदार्थ भ्रूणतक पहुंचने लगते हैं। कमल तीसरे मासमें अच्छी तरह बन जाता है और नालकी रक्त वाहिनियां कमलके स्थानसे ही पौष्टिक पदार्थ ग्रहण करती हैं। उन गड्ढोंमें भरे माताके रक्त और अङ्कुरोंकी रक्त वाहिनियोंके बीचमें रक्त वाहिनियोंकी ही दीवार और उनपर बाह्यावरण रहता है। यह इतनी पतली रहती है, कि आचूषणका कार्य बड़े मजेमें होता है। गर्भाशयमें जबतक बच्चा रहता है, तबतक स्वय सांस नहीं लेता, माताके द्वारा ही यह क्रिया हो जाती है।

चित्र नं० २३ ।



गर्भवती स्त्रीका लम्बाईके रुख काटा गर्भ, इसमें जरायु और भ्रूणकी अवस्थिति तथा अन्य शारीरिक यन्त्र आदिसे उसका सम्बन्ध बताया गया है ।

गर्भकी वृद्धि ।

एक मासका गर्भ ।—इस समय इसकी लम्बाई प्रायः ¼ इञ्च रहती है। यह चींटी जैसा रहता है। एक सिरा कुछ मोटा रहता है, दूसरा पतला। मुँहके स्थानपर एक दरार सी रहती है। आँखके स्थानपर दो काले काले तिल जैसे दाग रहते है।

दो महीनेका गर्भ ।—इस समय इसकी लम्बाई प्राय १॥ इञ्च हो जाती है। नाक, ओठ और आंखे दिखाई पड़ने लगती है। जननेन्द्रियका निर्माण कार्य आरम्भ हो जाता है। परन्तु इसका पता नही लगता है कि भ्रूण स्त्री है या पुरुष। मलद्वारका आकार दिखाई देने लगता है। फुसफुस, प्लीहा और उपवृक्क भी दिखाई देते हैं। आंतोंका नालके भीतरवाला भाग उसमें चला आता है। नालमें ऐंठन पड़ने लगती है। ललाटास्थि पर्शुका और शाखाकी अस्थियो का विकास-केन्द्र उभरने लगा है।

तीन मासका गर्भ ।—पैरको छोड़कर इसकी लम्बाई दो या तीन इञ्च हो जाती है। इस अवस्थामें सिर बहुत बड़ा तथा पलक और ओठ जुड़े रहते हैं। अंगुलियाँ अलग अलग दिखाई देती हैं। इस बातका भी चिन्ह स्पष्ट हो जाता है कि भ्रूण स्त्री है या पुरुष। हृदयका क्षेपक कोष्ट तैयार हो जाता है। पश्चात् अस्थि, जत्रुकास्थि, नासास्थि और शाखास्थिके केन्द्रोंका उदय हो जाता है।

चार मासका गर्भ ।—लम्बाई ३॥ इञ्च । पैर समेत ६ इञ्च । इस समय मस्तकको लम्बाई सम्पूर्ण शरीरकी चौथाई रहती है । कई स्थानोंमें रोंएँ दिखाई देते हैं । हाथ पैरमें कुछ गति भी दिखाई देती है । नख बनने लगते हैं ।

पाँच मासका गर्भ ।—कुल लम्बाई १० इञ्च । सारे शरीरपर महीन रोएँ आ जाते हैं । त्वचापर एक चिकना पदार्थ बना है । इसी पदार्थके कारण गर्भोदक भ्रूणकी त्वचाको नुकसान नहीं पहुँचा पाता ।

छः मासका गर्भ ।—लम्बाई प्रायः १२ इञ्च । वजन अन्दाजन १ सेर । अभीतक पलकें जुड़ी हैं । भवें और पसुली बनने लगी है । अन्य स्थानोंकी अपेक्षा सरके केश विशेष लम्बे हैं । अण्ड वृक्कके पास उदरके भीतर हैं । त्वचामें सलवट पड़ गयी है और कितने ही स्थानोंपर त्वचा के नीचे चर्बी हो गयी है ।

सात मासका गर्भ ।—कुल लम्बाई १४ इञ्च । पलकें अलग हो गयी हैं । त्वचाके नीचे चर्बी भी बढ़ गयी है । अण्ड अब कुछ नीचे उतर आये हैं और वङ्क्षणके पास पहुँचना चाहते हैं । सरपर चौथाई इञ्च लम्बे केश पैदा हो गये हैं । आँतोंमें कुछ मल भी आ गया है ।

आठ मासका गर्भ ।—इस समय लम्बाई १६-१७ इञ्च हो जाती है । चर्बी एकत्र हो जानेसे त्वचाकी झुर्रियाँ गायब हो जाती हैं । अण्ड वङ्क्षणमें आ जाते हैं ।

नौ मासका गर्भ।—लम्बाई १८ इञ्च। वजन २॥ सेर। इस समय अन्यान्य अवयवोंकी वृद्धिके साथ ही साथ अण्ड अण्डकोषमें आ जाते हैं।

दस मासका गर्भ।—लम्बाई २० इञ्चके लगभग। वजन ३॥ सेर। इस समय शरीर पूरा पूरा बन जाता है। हाथकी अङ्गुलियोंके नख पोरवोंसे आगे निकले रहते हैं। केश कोई १ इञ्च लम्बे रहते हैं। नाल शरीरके मध्यसे कोई आठ इञ्च नीचे लगा रहता है।

गर्भाशयके आयतनमें परिवर्त्तन।—भ्रूणकी वृद्धिके साथ ही साथ गर्भाशय भी बड़ा हो जाता है। यहां तक कि दसवें महीनेमें उसकी लम्बाई १० इञ्च हो जाती है। परन्तु इस समय भ्रूणकी लम्बाई २० इञ्च रहती है। अतएव, यह विचारणीय बात है कि वह १० इञ्च स्थानमें रहता किस तरह है।

गर्भाशयमें भ्रूणकी स्थिति।—भ्रूण गर्भाशयमें अत्यन्त सङ्कुचित भावसे रहता है। वह सीधा नहीं रहता। उसके हाथ पैर भी फैले नहीं रहते। उसका सिर आगे छाती पर झुका रहता है। पीठकी रीढ भी आगेकी ओर मुड़ी रहती है। दोनों जांघे उदरपर और टांगे जांघोंपर मुड़ कर रखी रहती हैं। मुट्ठियां बन्द रहती हैं। इस सङ्कुचित अवस्थाके कारण ही भ्रूणकी शकल अण्डे जैसी दिखाई देती है।

गर्भ धारणके कई प्रथम मासोंमें जब भ्रूण अत्यन्त छोटी अवस्थामें रहता है, उस समय उसका माथा ऊपरकी ओर

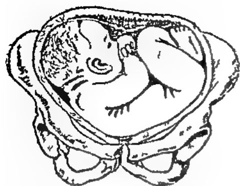
चित्र नं० ३४।

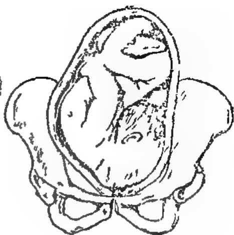


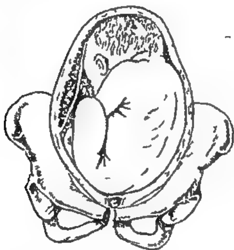
पूरे दिनोंके भ्रूणकी स्थिति।

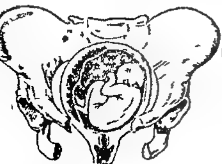
रहता है और धड़ नीचेको, पर पिछले महीनोंमें माथा नीचे हो जाता है और नितम्ब उपरकी ओर।

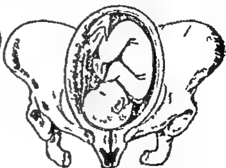
চিত্র নং ৩৫।











अधिकांश भ्रूण इसी अवस्थामें रहते हैं। प्रसवके समय योनिसे पहले सर निकलता है, चूतड पीछे निकलता है। पर जब उलटी अवस्था रहती है अर्थात सर ऊपर और चूतड नीचे रहता है, तब चूतडके बल जन्म लेता है अर्थात चूतड पहले बाहर आते हैं, और सर पीछे। कभी कभी बच्चा कान्धेके बल जन्म ग्रहण करता है। क्योंकि वह आडा पडा रहता है। आडी अवस्थामें पडे रहनेके कारण कभी कभी पैर या हाथ भी पहले बाहर निकलते हैं।

उदय।—बच्चेका जो अङ्ग सबसे प्रथम योनि-मुखपर आता है, वही उस गर्भका उदय कहलाता है। माथा पहले अडनेसे शिरोदय, मुख पहले अडता है, तो मुखोदय, सरका ऊँचा भाग पहले आता है तो शीर्षोदय। इसी तरह ललाटोदय, स्फिक-उदय, पार्श्वोदय, पादोदय आदि भेद हैं। सबसे सुखकर प्रसव शीर्षोदय होता है।

प्रसव।

प्रसव।—माताके शरीरसे भ्रूणका बाहर निकलना प्रसव कहलाता है। इस समय प्रसूताको कुछ न कुछ कष्ट होना आवश्यक है। पर जो स्त्रियाँ अपने दिन आलस्यमें बिताती हैं, जो किसी तरहका शारीरिक व्यायाम नहीं करती या जो बहुत कमजोर होती हैं, जिन्हें बहुत डर लगा करता हैं, जिनके वस्ति-गह्वरकी अस्थियाँ किसी रोगके कारण मुड जाती हैं, उन्हें विशेष कष्ट होता है।

इसके विपरीत जो हृष्ट पुष्ट हैं, जो कुछ न कुछ शारीरिक व्यायाम नित्य किया करती है, जिनके वस्तिगह्वरकी अस्थियाँ परिपुष्ट रहती हैं, जिनका स्वभाव शान्त है, उन्हें काम कष्ट होता है।

प्रसव क्रिया।—प्रसव कालमें जो दर्द होता है, वह गर्भाशयका मांस सिकुड़नेके कारण। पर वह एकदम सिकुड़ नहीं जाता। उसमें थोड़ी थोड़ी देरके पीछे सिकुड़न की लहरें उत्पन्न होती हैं। यह दर्द इसी सङ्कोचनकी लहरों के कारण होती है। इस तरह सङ्कोचन पैदा हो जानेके कारण गर्भाशयके भीतरका स्थान घटने लगता है। अतएव उसके भीतरकी चीज बाहर निकलनी ही चाहिये। गर्भाशयकी दीवारपर इस तरह दबाव पड़नेके कारण वह भीतर की चीजको बाहर ठेलती है। गर्भाशयके भीतर बच्चेका शरीर और तरल पदार्थ रहता है। अत मांसके सङ्कोचन के कारण जब गर्भाशयकी समाई कम होने लगती है तो उसके भीतरकी चीजें बाहर निकलने लगती हैं। इस समय गर्भोदकसे पूर्ण एक झिल्लीकी थैली गर्भाशयके मुँहमें अड़ जाती है। दबावके कारण मुँहके पासका मांस फैल जाता है और मुख चौड़ा हो जाता है। और इतना चौड़ा हो जाता है कि बच्चेका मुँह बाहर निकल आता है। इसी तरह समूचा शरीर निकल आता है। प्रसवके समय गर्भोदककी थैली फट जाती है। थैली फटनेके कारण गर्भोदक बहकर योनिसे बाहर निकलने लगता है। इससे योनि-

भागमें चिकनाहट पैदा हो जाती है और बच्चा आसानीसे निकल आता है।

इस समय नाल बच्चेकी नाभीसे लगा रहता है। इस नाल द्वारा ही वह गर्भाशयमें जुड़ा रहता है। नालकी लम्बाई अन्दाजन २० इञ्च होती है। इसमें धमनियोंका स्पन्दन मालूम होता है।

प्रसव होते ही और योनि-मार्गसे बाहर निकलनेके थोड़ो ही देर बाद नालका यह स्पन्दन बन्द हो जाता है और बच्चा योनिसे निकलते ही जोरसे चिल्ला उठता है। इसका कारण है कि वह सांस लेता है और वायु पहले पहल उसके फिफड़ेमें प्रवेश करता है। यदि बच्चा न चिल्लाये तो उसके मरनेका भय रहता है या वह मरा ही हुआ पैदा होता है।

नाल-काटना ।—नालका स्पन्दन बन्द होनेपर उसे काटनेकी तैयारी करनी चाहिये। अर्थात उसमें दो गांठें इस तरह लगानी चाहिये कि एक गांठ बच्चेकी नाभीसे दो इञ्चकी दूरीपर और दूसरी माताके प्रसव-द्वारके पास रहे। गांठ देने बाद दोनों बन्धनोंके बीचमें परन्तु पहले बन्धनके पाससे काट देनी चाहिये। ध्यान रहे कि गांठ लगानेका डोरा तथा नाल काटनेकी छुरी—दोनों ही शुद्ध और परिष्कृत होनी चाहिये। बल्कि इन्हें कुछ देरतक खौलते पानीमें उबाल लेना चाहिये। साथ ही धात्री को अपने हाथ भी साफ कर लेने चाहियें।

परिस्रव।—बस इसी समयमें बच्चा अपनी माताके शरीरसे अलग हो जाता है। इस समय भी कमल तथा भ्रूणावरण माताके शरीरके साथ रहता है। लगभग आध घण्टेमें कमल गर्भाशयसे अलग होकर भ्रूणावरणके साथ बाहर निकल आता है। इस भ्रूणावरणके साथ गर्भकला, कमल रक्त—ये सब निकलते हैं। इस समय थोड़ासा रक्त स्राव होता है। यदि एक घण्टेके भीतर यह सब चीजें बाहर न निकल आवें तो उन्हें निकालनेकी चेष्टा करनी चाहिये।

प्रसूता अर्थात बच्चा जननेवाली इस समय कमजोर हो जाती है। अतएव, उसकी अच्छी तरह सुश्रूषा होनी चाहिये। इस समय थोड़ी भी असावधानता होनेपर नाना प्रकारके रोगोंका आक्रमण हो सकता है और प्रसूताका जीवन संकटमें जा पड़ता है।

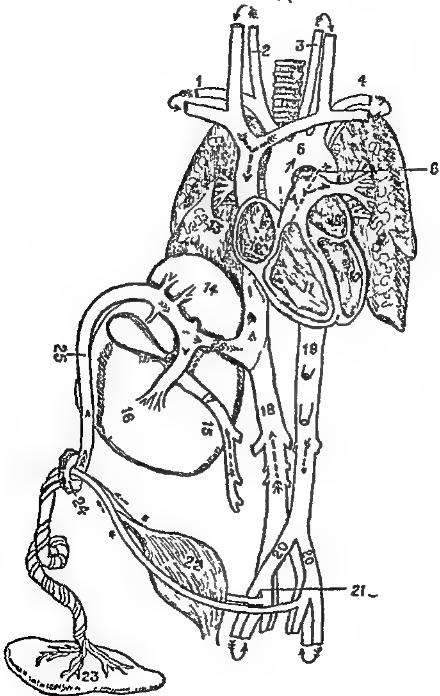
सूतिकागार।—जिस कमरेमें बच्चा जन्म लेता है, उसे सूतिकागार कहते हैं। यह बहुत ही साफ सुथरा और हवादार होना चाहिये। किसी तरहकी दुर्गन्ध न होनी चाहिये। स्राव आदि पोंछनेके लिये गन्दे कपड़ोंका कभी प्रयोग न किया जाये। भोजन हलका और पौष्टिक देना चाहिये। इसका पूरा पूरा प्रबन्ध रहे कि उसकी निद्रामें व्याघात न हो।

भ्रूणमें रक्त-संचालन।

गर्भके बाहर, अर्थात जन्म लेने बाद मानव देहमें रक्त-सञ्चालनकी क्रिया किस तरह होती है, यह पहले बताया जा चुका है :—(देखिये पृष्ठ ६०)। परन्तु मानव देह तथा गर्भस्थ भ्रूणके रक्त-सञ्चालनमें बहुत बड़ा अन्तर रहता है। इसका कारण यह है कि गर्भस्थ भ्रूणके श्वास-प्रश्वासकी क्रिया फेफड़ोंके द्वारा नहीं होती। दूसरे शब्दोंमें इस तरह कह सकते हैं कि भ्रूणके फेफड़े काम ही नहीं करते और उनके शरीरकी रक्त-शुद्धिका कार्य कमलके द्वारा होता है।

नालकी स्थिति बताते समय यह बताया जा चुका है कि नाल एक ओर भ्रूणकी नाभीसे सटा रहता है तो दूसरी तरफ कमलसे। नालमें तीन रक्तवाहिनियाँ रहती हैं — इनमें दो धमनियाँ (जिसमें अशुद्ध रक्त रहता है) और एक शिरा होती है, जिनमें शुद्ध रक्त रहता है। इन धमनियों से भ्रूणका अशुद्ध रक्त कमलोंमें पहुँचता है और शिरा द्वारा शुद्ध रक्त कमलसे लौटकर भ्रूणके शरीरमें जाता है। इसके अलावा भ्रूणकी महाधमनी भी अपने अन्तिम भागमें कई शाखाओंमें विभक्त हो जाती है अर्थात प्रत्येककी दो बड़ी शाखाएँ बन जाती हैं। इनमेंसे एकका काम है वस्ति-गह्वरके भीतरवाले अङ्गोंका पोषण करना और दूसरी वङ्क्षण-स्थानसे घूमती हुई उरुमें प्रवेश कर जाती है। इसके बाद वस्तिगह्वरकी धमनियोंसे दो शाखाएँ निकलती हैं, जो नाभि-धमनियाँ कहलाती हैं।

चित्र नं० २६।



भ्रूणमें रक्त-सञ्चालन।

चित्र नं० ३६ का परिचय।

1 Right sub clavian artery—दक्षिण अक्षकाधोवर्त्तिनी धमनी।

2 Right common carotid artery—दक्षिण मूल शिरोधीया धमनी।

3 Left common carotid—वाम मूल शिरोधीया धमनी।

4 Left sub clavian artery—वाम अक्षकाधोवर्त्तिनी धमनी।

5 Aorta—महाधमनी (महराव)।

6 Ductus arteriosus—धमनी संयोजक।

'8 Left atrium—वाम ग्राहक-कोष्ठ।

9 Left lung—बायाँ फिफड़ा

10 Left ventricle—बायाँ क्षेपक कोष्ठ।

11 Right ventricle—दाहिना क्षेपक कोष्ठ।

12 Right atrium—दाहिना ग्राहक कोष्ठ।

13 Right lung—दाहिना फेफड़ा।

14 Left lobe of the liver—यकृतका वाम भाग।

15 Liver—यकृत।

16 Right lobe—यकृतका दाहिना भाग।

17 Portal veins—सयुम्ना शिरा। (इसमें अन्त्रछद गामी शिरा, प्लीहा शिरा और अधोगा शिरा मिल गयी है)।

18 Inferior Venacava—अधोगा महाशिरा।

19 Aorta—महाधमनी।

20 Common Iliac—श्रोणिगा मूलीया धमनी।

20 Common Iliac—श्रोणिगा मूलीया धमनी।

21 Hypogastric arteries—अन्त श्रोणिगा धमनी

22 Bladder—मूत्राशय।

23 Placenta—कमल।

24 Umbilicus—नाभिमूल।

26 Ductus venosus—शिरा संयोजक।

नाभि-शिरा।—यह शिरा कमलसे आरम्भ होकर नालके भीतरसे होती हुई उदर-गह्वरमें जा पहुँचती है और वहासे बराबर यकृतके निचले भागमें जाकर कई शाखाओंमें विभक्त हो जाती है। जिनमेंसे एक शाखा यकृतके दाएँ भागकी ओर और दो शाखायें बीचके भागमें चली जाती है। अर्थात एक तो सयुक्त शिरा (Portal veins) में मिल जाती है और दूसरी अधोगा महाशिरासे। इनके अलावा जो छोटी छोटी शाखाएँ और है वे सब यकृतमें चली जाती है। इससे होता है यह है कि कमलसे जो रक्त आता है उसका विशेष भाग यकृतमें पहुँचता है और कुछ अधोगा महाशिरा (Inferior vena cava) में चला जाता है।

इस तरह जो रक्त यकृतमें चला जाता है वह भी वहाँ रह नहीं जाता। वह भी यकृतको शिराओं (Hepatic veins) की राहसे अधोगा महाशिरामें आ जाता है। इस से यह मालूम हुआ कि अधोगा महाशिरामें शुद्ध और अशुद्ध दोनो ही रक्त रहता है। शुद्ध रक्त नाभि-शिरा द्वारा आता है और अशुद्ध यकृत उदर तथा अधो-शाखाओंसे आ पहुँचता है। इन सब रक्तोको लेकर अधोगा महाशिरा ग्राहक कोष्ठ मे जा पहुँचती है। एक बात यहाँ खयाल रखनेकी है कि भ्रूणके दोनो ग्राहक कोष्ठोंके बोचमें रहनेवाले परदेमें एक ऐसा छिद्र रहता है जिससे दोनो ग्राहक कोष्ठ आपसमें मिल जाते है। इसे अण्डाकार विवर (Foramen ovale) कहते है। अधोगा महाशिरासे रक्त बिना उर्द्ध्वगा महाशिरा

(Superior venacava) से मिले ही इस छिद्रके भीतर से निकलकर बायें ग्राहक कोष्ठमें (Left atrium) जा पहुँचता है। वहांसे फिर द्विकपाट वाले पथ (Mitral valve) द्वारा बाएँ क्षेपक कोष्ठमें (Left ventricle) चला जाता है। उर्द्ध्वगा महाशिराका रक्त दाहिने क्षेपक कोष्ठमें जाता है। जब क्षेपक कोष्ठ सिकुड़ने लगता है तो बाएँ क्षेपक कोष्ठ (Left ventricle) का रक्त महाधमनी (Pulmonary veins) में चला जाता है। इस समय एक छोटी धमनीके द्वारा फुसफुसीया धमनी महाधमनीके महराबसे मिल जाती है। यह ऐसे स्थानपर मिलती है, जहां महाधमनी (Aurota) से तीन शाखाएँ निकली हुई होती हैं। इसी जगह महराब बनता है। अब बाएँ क्षेपक कोष्ठसे जो रक्त महाधमनीके महराबमें पहुँच जाता है, वह हृदयमें जाता है तथा तीन बड़ी धमनियों द्वारा शिरमें और दोनों उर्द्ध शाखाओंमें जा कर इन अङ्गोंको पोषण करता हुआ, बाकी नीचेवाली अधोगा महाशिरामें चला जाता है।

वह रक्त जो ऊर्ध्व शाखाओंका पोषण करता है, ऊर्ध्वगा शिराकी राहसे दाहिने ग्राहक कोष्ठमें जाकर इन अङ्गोंको पोषण करता हुआ अधोगा महाधमनीमें मिल जाता है। यह इस तरह कि उर्द्ध्व शाखाओंको पोषण करता हुआ जो रक्त वापस आता है, वह दाहिने ग्राहक कोष्ठमें आता है। फिर उर्द्ध्वगा शिराका रक्त तीन कपाटवाले द्वार (Tricuspid valve) में जाकर दाहिने क्षेपक कोष्ठ (Right

ventricle) मे जाता है। यहा एक अर्द्ध कपाट द्वार रहता है, जिसकी वजहसे अधोगा और ऊर्ध्वगा महाशिराका रक्त मिल नही पाता। इसके बाद दाहिने क्षेपक कोष्ठ (Right ventricle) का रक्त फुसफुसीया धमनीमें जाकर महाधमनी में प्रवेशकर उसके रक्तसे मिल जाता है। फेफड़ोंके काम न करनेके कारण धमनीके स्रोतोंसे रक्त क्लोमोंकी धमनीमें मिल जाता है। इसके बाद यह सम्पूर्ण रक्त उदरकी महाधमनी (Abdominal Aurota) में जाता है। कुछ और भी नीचे उतरकर उदरकी धमनीसे दो संयुक्त धमनिया (Iliac artery) निकलती है। इनकी भी दो दो शाखाए है। एक नाभिकी धमनी (Umbilical artery) और दूसरी बाह्य वंक्षण धमनी (External Iliac artery)। नाभि धमनी नालके भीतरसे नाभि कमलमें जाती है। बाह्य वंक्षण धमनी दोनो निम्न शाखाओंमें जाती है। इसके बाद नाभी तक केशिका शिराङ्कुरोंके सूक्ष्म रक्तवाहक स्रोतों (Capillaries inside the villi) में जाता है और इस तरह साफ हुआ रक्त ऊपर बताए हुए पथोंसे भ्रूण-हृदयमें जा पहुँचता है। इस तरह रक्तका एक चक्कर पूरा होता है।

इन वर्णनोंपर ध्यान देनेसे मालूम होता है कि भ्रूणका यकृत सबसे आवश्यक पदार्थ है और इसी लिये सबसे शुद्ध रक्त उसे ही प्राप्त होता है। बच्चोंका यकृत जवान मनुष्योंकी अपेक्षा वजनमें भी भारी होता है। इसके

उससे कम शुद्ध रक्त माथा और ऊर्ध्व शाखाओंकी ओर, उससे भी कम शुद्ध उदर तथा अधोशाखाओंको प्राप्त होता है।

गर्भस्थ शिशु और युवकोंके रक्तसंचालन अंगोंके प्रभेद।—(१) गर्भस्थ भ्रूणके दोनो ग्राहक कोठो के मध्यका परदा पूरा पूरा बना नही रहता। उसमें एक ऐसा छिद्र रहता है, जिससे दोनो कोष्ठ आपसमें मिल जाते है।

(२) फुसफुसीया धमनी एक महाधमनीसे मिली रहती है। जो चीज इन दोनोंको मिलाती है, उसे धमनी संयोजक कहते है।

(३) गर्भस्थ शिशुको दो नाभि-धमनियाँ और एक नाभि शिरा होतो। इस शिराका सम्बन्ध संयुक्त शिरा और अधोगा महाशिरासे रहता है।

प्रसवके बादका परिवर्त्तन।

प्रसव होतेही फेफड़ेमें बाहरी हवा प्रवेश करती है। बस हवा प्रवेश करते ही नाभि-कमलका रक्त-प्रवाह रुक जाता है और वह अण्डाकार विवर भी बन्द होकर हृदय सम्पूर्ण बन जाता है। नाभि धमनी और नाभि-शिरा भी बन्द हो जाती है तथा धमनी और शिराके स्रोत भी रक्त जम कर रुक जाते है। इस तरह रक्तकी गति परिवर्त्तित हो जाती है।

(स्त्री पु० जाति) (Determination of Sex) ।—सभ्य संसारमें कन्याओंकी अपेक्षा पुत्र अधिक पैदा होते हैं। गर्भका भ्रूण जब आठ सप्ताह या दो महीनेका हो जाता है, उसी समय स्थिर हो जाता है कि भ्रूण पुरुष जातिका है या स्त्री जातिका। हिन्दुओंकी पुंसवन क्रिया दूसरे महीनेके अन्तमें हो की जाती है। पति और स्त्रीकी उम्रके तारतम्यके अनुसार, शुक्रकीटकी अपूर्णता या पिता माताकी परिपुष्टि और गर्भिणीके पेशाबमें चीनीका मौजूद रहना, कन्या उत्पन्न होनेमें सहायता करता है। मांस भोजन करने या नाइट्रोजिन्स पदार्थ खानेसे पुत्र-सन्तान अधिक पैदा होती है।

मृत्यु (Death) ।—जन्मके बाद जीवनी शक्ति बढ़ती बढ़ती क्रमशः एक निर्दिष्ट सीमापर पहुँच जाती है, उस समयसे फिर उसकी वृद्धि न होकर, वह धीरे धीरे क्षय होने लगती है। अन्तमें एक ऐसी अवस्था आ जाती है, कि फिर शक्ति नहीं रहती। इस अन्तिम परिवर्त्तनको मृत्यु कहते हैं। (जीवात्माके इस शरीरको त्यागनेको मृत्यु कहते हैं।)

आजका भ्रूण या मनुष्य कलका भ्रूण या मनुष्य नहीं है। बल्कि वह लगातार अनन्तकालसे जो परिवर्त्तन (Cellular death) या मृत्यु हो रही है, हमलोग उसे रोज देखते हैं, समझते हैं, परन्तु समयपर और अवसरपर याद नहीं आता।

प्रगण्ड-अस्थि (Upper-arm-bone)।—प्रगण्ड या ऊर्द्ध-बाहु (ऊपरी बाँह) की यह हड्डी लम्बी, मजबूत और खोखली है। इसके दोनो सिरे निचले भागको अपेक्षा कुछ ज्यादा मोटे होते हैं। ऊपरका सिरा मुण्डकी तरह गोल है और स्कन्ध-अस्थिके गह्वरमें घुसकर सन्धि तैयार करता है। प्रगण्ड अस्थिका निचला सिरा चिपटा है और दोनों प्रकोष्ठ अस्थिके साथ मिला हुआ है। इस संयोगस्थलका नाम "केहुनी" (Elbo) है।

(ख) प्रकोष्ठकी हड्डियां।

प्रत्येक प्रकोष्ठमें दो दो हड्डियाँ हैं। जैसे —प्रकोष्ठ अस्थि एक और चक्रदण्ड अस्थि एक।

प्रकोष्ठ अस्थि (Ulna)।—प्रकोष्ठकी दोनों हड्डियोंमें जो बहुत लम्बी है, उसीका नाम प्रकोष्ठ अस्थि है। यह मुण्ड केहुनी और प्रगण्ड-अस्थिके साथ इस तरह मिला हुआ रहता है कि यह हड्डी सामनेकी ओर कानोंतक मोडी जा सकती है। पर पीछेको ओर इस तरह मोडी नहीं जा सकती।

चक्रदण्ड-अस्थि (Radius)।—यह हड्डी प्रकोष्ठ अस्थिकी अपेक्षा छोटी है और कुछ टेढी है। देखनेमें यह गाडीके चक्के जैसी है, इसोलिये इसे "चक्रदण्डास्थि" कहते हैं। इसके ऊपरकी ओर कटोरीको तरह एक गढहा है।

इसी जगह प्रकोष्ठ अस्थि और दोनो प्रगण्ड अस्थियाँ मिली हैं। ये नीचेकी ओर मणिबन्धको दोनों अस्थियोंसे जुडी हुई हैं।

(ग) हाथकी हड्डियां।

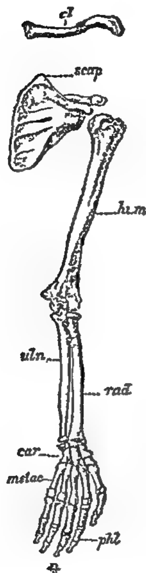
सत्ताइस हड्डियोंसे हाथ बना है, जैसे —"मणिबन्ध-अस्थि" आठ, "करभ अस्थि" पाँच और "अँगुलि अस्थि" चौदह।

मणिबन्ध-अस्थि (Carpal bones)।—दो कतार में चार चारके हिसाबसे हाथको कलाईमें आठ हड्डियाँ हैं। ये बन्धनीसे आपसमें मिली हुई हैं। मणिबन्धको हड्डियाँ सामनेकी ओर तलहत्थीकी हड्डियों से मिली हुई हैं।

करतल-अस्थि (Metacarpal bones)।—पाँच लम्बी हड्डियों से तलहत्थी बनी है। ये एक ओर मणिबन्ध की अस्थियों से और दूसरी ओर अँगुलीकी हड्डियों से मिली हैं। ये ही पाँच हड्डियाँ क्रमसे हाथके अँगूठे, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठिका आदि अँगुल्योंको धारण कर रही हैं।

हस्त-अगुल्यस्थि (Phalanges of the fingers) —हाथकी पाँच अँगुलियों में कुल चौदह छोटी खोखली हड्डियाँ हैं। जैसे —अँगूठेमें दो, तर्जनीमें तीन। मध्यमामें तीन, अनामिकामें तीन और कनिष्ठिकामें तीन। अँगूठेके सिवा सब अँगुलियोंमें तीन तीनके हिसाबसे हड्डियाँ हैं। यह मुट्ठी बाँधनेपर स्पष्ट मालूम होता है।

चित्र नं० ३७।



स्कन्ध अस्थि (Scapula)   चक्रदण्ड अस्थि (Radius bone)

प्रगण्डास्थि (Humerus bone)   कैहुनी, प्रकोष्ठास्थि (Ulna)।

करभ अस्थि (Metacarpal bones)

अङ्गुलि अस्थि (Phalanges)   मणिबन्ध अस्थि (Carpal bones)

मणिबन्ध (कलाई), तलहत्थी और अँगुलियोंकी हड्डियाँ सुदृढ़ पर झुकजानेवाले "बन्धन (Ligaments)" द्वारा इस ढंगसे मिली हुई हैं, कि वे कलम पकड़नेसे लेकर हथौड़ा चलानेतकका सब काम कर सकती हैं।

यदि हमारे हाथमें २७ हड्डियाँ और १५ गन्थियाँ न रहती तो हमलोग हाथ या अँगुलियोंको न तो सहजमें जल्दी जल्दी हिला सकते और न टेढ़ा ही कर सकते।

बाहुकी अस्थियाँ मांसपेशी और पेशी-बन्धनी द्वारा अपनी जगहपर बन्धी हुई रहती हैं और इन सब मांसपेशियोंकी सहायतासे ही उन्हें हिला सकते हैं।

हमारे बाहुमें प्रधानतः दो मांसपेशियाँ हैं —(१) एक बाहुके ऊपरकी ओर है। इसका एक सिरा प्रकोष्ठके "चक्र दण्ड अस्थि (Radius bone)" के भीतर घुस गया है और दूसरा सिरा दो भागोंमें बटकर कन्धेकी जड़में स्कन्धास्थिमें मिल गया है। इस मांसपेशीका अन्तिम सिरा दो भागोंमें बँट गया है। इसी वजहसे इसको द्विमूलपेशी (Biceps muscles)" कहते हैं। (२) दूसरा बाहुके नीचे है—इसका एक प्रान्त प्रकोष्ठ अस्थि (Ulna) में एक ओर घुस गया है और दूसरा छोर तीन भागोंमें बँटकर एक "स्कन्धास्थि (Scapula)" के साथ और दूसरा अग्र प्रगण्डास्थि (Humerus) के पीछेवाले भागके साथ मिला हुआ है। इस मांसपेशीका अन्तिम छोर तीन भागों

में विभक्त रहनेके कारण इसका नाम त्रिशिरापेशी (Triceps muscles) पड़ा है।

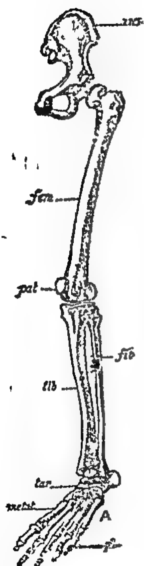
अंग-संचालन करनेके लिये प्रत्येक अंगकी अस्थिके साथ दो दो मांस पेशियाँ रहती हैं—एक संकुचित (सिकुड़ी हुई) और दूसरी प्रसारित फैली हुई। द्विमूल पेशीके (Biceps muscles) संकोचनकी सहायतासे हमलोग कोई चीज उठा सकते हैं। भोजन कर सकते हैं या कोई दूसरा काम कर सकते हैं। इसीलिये, इसे "सङ्कोचकपेशी" (flexor) कहते हैं। सिकुड़े हुए हाथको हमलोग त्रिशिरा पेशी (Triceps muscles)" द्वारा फैला सकते हैं। इसीलिये, इसको "प्रसारक पेशी (Extensor)" भी कहा जाता है। इन सब पेशियों का बिचला भाग मोटा रहता है और दोनो छोर क्रमशः पतले होकर अस्थिके साथ मिल जाते हैं।

२। निम्न शाखा या दोनों पैर।

(Lower limbs)

हमारे पैर भी दो हैं—दाहिना और बायाँ। पैरोंकी गठन प्रणाली और हड्डियों की संख्याके साथ दोनों बाहुओं की गठन प्रणाली और संख्याकी बहुत कुछ समानता दिखाई देती है। (चित्र नं० ३७) जैसे '—दोनों बाहुओं की हड्डियाँ जिस तरह तीन भागों में विभक्त हैं, पैरकी हड्डियाँ भी उसी तरह तीन भागोंमें बटी हुई हैं। प्रत्येक पैरमें तीस तीस हड्डियाँ हैं। जैसे '—

चित्र न० ३७।



उरु अस्थि (Femur)

जानु सन्धि अस्थि (Patella)

पश्चात् जंघास्थि (Fibula)

सम्मुख जंघास्थि (Tibia)

पश्च सन्धि अस्थि।(Tarsal bone)

पदतल अस्थि (Metatarsal bone)

पदाङ्गुलि अस्थि (Phalanges)

क) उरुदेश (thigh) —— अस्थि (femur)

(ख) जङ्घामें (lower leg)	घुटनेकी चक्की या जानु-सन्धि की अस्थि (patella or knee cap bone)—एक। सम्मुख जङ्घास्थि (tibia or shin bone)—एक। पश्चात् जङ्घास्थि (fibula or splint bone) एक।
(ग) पैर (foot)	चरण सन्धि अस्थि (अर्थात् पैर और जघाके सन्धि स्थानवाली हड्डी) (tarsal bones or ankle bones) इत्यादि सात है पदतल अस्थि (तलवेकी हड्डी (metatarsal bones or bones of the instep) पाँच पदाङ्गुलि अस्थि (phalanges of the tose) चौदह

(क) उरुकी अस्थियाँ।

"उरु अस्थि (femur or thigh bone)" केवल एक है। शरीरकी सब हड्डियोमे "उरु अस्थि" सबसे मोटी और लम्बी तथा मजबूत हड्डी है। यह पुट्ठेसे लेकर घुटने तक फैली हुई है। प्रगण्डकी तरह इसमें भी ऊपरकी ओर

एक मुण्ड है, इसका माथा पुट्ठेके गढ़ेमें (या उरु सन्धि के खातमें) घुस गया है और इस तरह उरु सन्धि बनी है। प्रगण्ड अस्थिका गोल माथा भी स्कन्धास्थि गह्वरसे सन्धि स्थलकी अपेक्षा उरु और पुट्ठेकी सन्धिका गह्वर बहुत ज्यादा गहरा है। इसीलिये, बाहुकी तरह पैर भी इतने सहजमें घुमाये फिराये नहीं जा सकते।

(ख) जङ्घाकी हड्डियाँ।

तीन हड्डियोंसे जाँघा बनी है। जैसे —जानु सन्धि अस्थि, सम्मुख जंघास्थि और पश्चात् जंघास्थि।

जानुसन्धि अस्थि (Patella or knee cap bone)।—घुटनेकी चक्कीकी हड्डी चिपटी और तिकोनिया है। यह चौदह मजबूत बन्धनियोंसे अपने स्थानपर सुरक्षित है।

सम्मुख जंघास्थि (*Tibia or shin bone*)।—*यह लम्बी हड्डी जाँघके सामनेवाले भागमें रहती है। यह* एक कब्जा जैसी सन्धिके द्वारा उरुकी अस्थिके साथ मिलकर समूचे शरीरका भार वहन करती है।

पश्चात् जंघास्थि (Fibula or splint bone)।—यह पतली लम्बी हड्डी जाँघकी पिछले भागमें सम्मुख जंघास्थिके साथ समान्तराल (parallel) पर रहती है और सम्मुख जंघास्थिके साथ इसके दोनों सिरे अचल भावसे मिले हुए हैं।

(ग) पैरकी अस्थियां।

पैरकी हड्डीकी संख्या २६ है। हाथ जिस तरह कलाईमें, तलहत्थीमें और हाथकी अङ्गुलियोंमें—इस तरह तीन भागोंमें विभक्त है। उसी तरह पैर भी, गुल्फ, तलवा और पैरकी अङ्गुलियाँ—इस तरह तीन भागोंमें विभक्त है। जैसे :—(१) पैर चरण-सन्धि अस्थि ७, पदतल-अस्थि (तलवेकी हड्डियाँ) ५, और पैरकी अङ्गुलियोंकी हड्डियाँ १४।

(१) **चरण-सन्धि-अस्थि** (Tarsal bones or ankle-bones) सात हड्डियोंसे यह सन्धि देश (अर्थात् "चरण-सन्धि„ "गुल्फ" और कुछ पैरका तलवा) बना हुआ है। इनमें "एँडी" की हड्डी (os calcis)" सबसे बड़ी है।

(२) **पदतल अस्थि** (Metatarsal bones or bones of instep तलवेकी हड्डी)।—पाँच हड्डियोंसे पैरका तलवा बना है। ये पैरकी अंगुलियाँ और पैरकी हड्डियोंके बीचमें है। इन पाँचों हड्डियोंमें एक एकने पैरकी अंगुली पकड़ रखी है।

(३) **पदाङ्गुलि अस्थि** (Phalanges of the toes)।—पैरकी पाँच अंगुलियोंमें कुल चौदह छोटी मोटी और खोखली हड्डियाँ है। जैसे —अँगूठेमें दो और प्रत्येक बगलोमें तीन तीन। हाथकी उँगलीकी हड्डियो को

अपेक्षा पैरकी उँगलीकी हड्डियाँ छोटी हड्डियोंकी, तरह सहजमें नहीं हिलाई जा सकती।

सच तो यह है कि बाहु और पैर एक ही उपादानसे बने हैं। पैरकी मासपेशी बाहुकी मासपेशीकी तरह ही होती है। पैरकी बहुत-सी मासपेशियाँ हैं, उनमें उल्लेख करने योग्य चार हैं।

(१) उरूके सामनेवाली मांसपेशी।—यह पञ्जरास्थिसे बन्धनीके रूपमें निकलकर "उरू अस्थि (Femur)" के ऊपर आकर मोटी हो गयी है और अन्तमें फिर सूक्ष्म होकर "चक्री (Patella)" के भीतर घुस गयी है।

(२) उरूके पीछेवाली "द्विमूल मांसपेशी" यह भी हाथकी द्विमूल मासपेशीकी भाँति है। इसका एक छोर पश्चात् जङ्घास्थिके बीचमें घुस गया है और दूसरा छोर दो भागोंमें विभक्त होकर एक अंश पञ्जरास्थिके साथ और दूसरा अंश उरु अस्थिके साथ मिल गया है।

(३) पिण्डिकाकी मासपेशी (Calf of the leg)।—इसका ऊपरी छोर उरु-अस्थि (femur)" सम्मुख जङ्घास्थि (tibia) और पश्चात् जघास्थि (fibula) के साथ मिला हुआ है और निचला छोर पतला होकर "एँड़ीकी हड्डी (hill bone)" में घुस गया है। यह हाथकी त्रिशिरा मासपेशीके ही (triseps muscles) समान है

(४) सम्मुख जङ्घाकी मांसपेशी।—यह सम्मुख जंघास्थिके सामनेकी ओरके ऊर्द्ध प्रदेशसे निकलकर चरणास्थिके बीचमें घुस गयी है। पैरको सामनेवाली और पीछेवाली मास-पेशियोंके सिकुड़ने और फैलनेकी वजहसे हमारे शरीरकी समता सुरक्षित रहती है। अर्थात हमलोग इच्छानुसार सीधे होकर बैठ और खड़े हो सकते हैं।

खाद्य क्या और कितने तरहके हैं?

जो चीज खानेके योग्य होती है, उसे खाद्य कहते हैं। पर आजकल भोजनके पदार्थ मात्रको खाद्य कहा जाने लगा है। चाय, काफी, शराब आदिकी गणना खाद्यमें नहीं हो सकती। इस देशमें कितनी स्त्रियाँ जली हुई मिट्टी खाया करती हैं, पर क्या उसे भी "खाद्य" कहा जा सकता है! सच तो यह है कि जिसे खानेसे शरीरकी वृद्धि हो, शरीरमें ताप पैदा हो, शरीर पुष्ट होता हो, शक्ति सचय हो और क्षय होना बन्द हो, वही असली खाद्य है। हमारा शरीर जिन उपादानोंसे बना हुआ है, उन सब उपादानोंके योग्य ही खाद्य ग्रहण करना आवश्यक है। अंगोंके हिलाने और संचालन करने तथा शारीरिक परिश्रम करनेके कारण हमारे पेशी तन्तुसे "अङ्गार (carbon)" उद्‌यान (hydrogen) और अम्ल यान (oxygen) का क्षय हुआ करता है। इनकी पूर्त्ति भोजनके पदार्थों से ही हुआ करती है।

खाद्यको खासकर दो भागोंमें बाँटा जा सकता है,—(१) जान्तव पदार्थ (Organic matter) और (२) अजान्तव पदार्थ (Inorganic matter), ये दोनों भी चार प्रकारके उपादानोंसे बने हैं।

(क) जैव (Organic) पदार्थ।

(१) छाना जातीय उपादान (Proteids)।—अर्थात आमिष जातीय खाद्य।

(२) मक्खन या तेल जातीय उपादान (fat)

(३) शर्करा या शालि जातीय उपादान (Carbohydrates)

(ख) अजैव (Inorganic) पदार्थ।

(४) पानी और खनिज (जैसे, लवण जातीय) उपादान (Mineral, e, g, salts) निरामिष जातीय खाद्य।

(क) जैव (Organic) पदार्थ।

(१) छाना जातीय उपादान (Proteids)।

—इस जातिके उपादान हमारे शरीरमें मांस पैदा करते हैं। छाना पनीर (cheese), मछली, अण्डेका सफेद अंश, बहुत तरहकी दाल वगैरह इस जातिके खाद्यके अन्तर्गत हैं। मैदा, सागू, चावल, आँटा, श्वेतसार वगैरहमें इस जातिके उपादान थोड़ी मात्रामें रहते हैं, इस जातिके पदार्थ

यवचारजान (Nitrogen) अधिक परिमाणमें रहते हैं। हमारे शरीरमें जो अनगिनती छोटे छोटे कोष (cells) है, वे सभी प्रधानत., प्लज्म (proto plasm) नामक यव-चारजान पदार्थसे बने हुए हैं। छाना जातीय खाद्यके द्वारा इनके चयकी पूर्त्ति हुआ करती है और इनका फिरसे निर्माण हो जाया करता है तथा नाना प्रकारके रसोंकी उत्पत्ति हुआ करती है। इस जातिके खाद्यसे मासपेशी, और शरीरके अन्यान्य यन्त्रोंके चयकी पूर्त्ति हुआ करती है। शारीरिक दहन क्रिया तथा कुछ परिमाणमें इनसे ताप और शक्ति भी पैदा हुआ करती है।

२। **मक्खन जातीय (Fat) उपादान**।— मक्खन, घी, तेल, चर्बी वगैरह पदार्थ मक्खन जातीय खाद्यके अन्तर्गत है। इसमें यवचारजान (nitrogen) नहीं है, केवल कोयला (carbon), उद्जान (hydrogen) और अम्लजान (oxygen) है। इस जातिके पदार्थका प्रधान काम है, शक्ति, ताप और मेदका बढ़ाना। छाना जातीय खाद्यमें (proteid) ताप और शक्ति उत्पन्न करनेकी शक्ति थोड़ी है। मक्खन जातीय खाद्यके द्वारा दूसरे खाद्य पदार्थों के पचनेमें भी विशेष सहायता मिला करती है।

३। **शर्करा जातीय (Carbohydrates) उपादान**।—चीनी, गुड़, चावल, मैदा, आरारोट, बार्ली, जव, आलू, शाक सब्जी, वगैरह पदार्थ इस जातिके

खाद्यके अन्तर्गत हैं। इस जातिके खाद्यमें यवक्षारजान (nitrogen) नहीं रहता। मक्खन जातीय खाद्यमें (fat) कोयला (carbon), उदजान (hydrogen) और अम्लजान (oxygen) रहता है। इस जातिके उपादानसे शरीरमें मेद और शक्ति उत्पन्न होता है, परन्तु मक्खन जातीय खाद्यसे (fat) जितना अधिक शरीरका ताप और शक्ति पैदा होती है। इस जातिके खाद्यसे उतना अधिक ताप या शक्तिका सञ्चार नहीं होता।

मास, मछली बिना शरीरमें शक्ति नहीं रहती या पैदा नहीं होती—यह बिलकुल भ्रमपूर्ण विश्वास है। मास जातीय खाद्यसे हमारे शरीरकी मासपेशियाँ और यन्त्र आदि का क्षय पूरा होता है। मक्खन जातीय शर्करा खाद्यसे हमारे शरीरमें प्रकृत बल और शक्तिका सञ्चार हुआ करता है।

(ख) अजैव (Inorganic) पदार्थ।

४। खनिज (Minerals) उपादान।—नमक, पानी वगैरह इसी जातिके खाद्यके अन्तर्गत हैं। प्राय सब तरहके खाद्यमें ही लवण (नमक) कुछ न कुछ मौजूद रहता है। इसके अलावा कितने ही प्रकारके खाद्योंके साथ नमक विशेष भावसे मिलाकर हमलोग खाते हैं। नमक एक जरूरी खाद्य है। भोजनके साथ नमक मिले रहनेके कारण मुँहसे बहुत ज्यादा ५० लार

निकलती है और लार या लाला रस निकलकर पाचन क्रियामें बहुत कुछ सहायता पहुँचाती हैं। खाद्य पदार्थोंमें नमकके अलावा पोटाससे बना नमक (salt of potassium), लौह घटित लवण (salt of iron) वगैरह बहुत तरहके खाद्य पदार्थ मौजूद रहते हैं। ये हमारे शारीरिक यन्त्र गठनमें विशेष सहायता करते हैं।

पानीके बिना हमारे शरीरकी रक्षा नहीं हो सकती। हमारे शरीरमें प्रायः ३० भाग पानी है। मल, मूत्र, पसीना वगैरह कितने ही प्रकारसे पानी बराबर ही बाहर निकला करता है। खाद्यके साथ और अलग भावसे, हमलोग पानी पीकर उसमें जो कमी हो जाती है, उसे पूरा कर लेते हैं। इस तरह पानी पीकर हमलोग पाचन क्रियामें सहायता पहुँचाते हैं और हमारे शरीरमें जो खून है, उसे पतला रखने और उसके सचालनमें भी मदद देते हैं। इसके अलावा शरीरके समस्त दूषित पदार्थ पानीके साथ मिलकर मल मूत्र और पसीनेके रूपमें लगातार बाहर निकाला करते हैं।

ऊपर लिखे चार प्रकारके उपादानोंसे बने-खाद्य पदार्थो से ही हमारे शरीरकी रक्षा होती है और वह पुष्ट हुआ करता है। खाद्यमें केवल दूधमें ही इन चारों प्रकारके उपादानोंका एक साथ समावेश दिखाई देता है। इसी लिये केवल दूधसे ही बच्चोंके शरीरकी रक्षा हुआ करती है और बुढापेमें केवल दूध पीकर ही मनुष्य जीवित रह

सकता है। दूधके सिवा और किसी भी खाद्यमें इन चारो तरहके उपादान नहीं दिखाई देते। इसलिये, केवल मांस या केवल भात द्वारा—किसी एक तरहके खाद्यके द्वारा हमारा स्वास्थ्य ज्योंका त्यों बना नहीं रह सकता। भात, दाल, तरकारी और भी बहुत तरहके खाद्य स्वास्थ्य रक्षाके लिये आवश्यक हैं। ताजे, शाक, पके हुए फल और नेबु स्वास्थ्यके लिये विशेष सहायक हैं। भोजनके बाद खासकर गुरुपाक द्रव्य भोजनकर लेनेबाद थोड़ा खट्टा पदार्थ (acid) खा लेनेसे पाचन क्रियामें विशेष सुविधा होती है।

खाद्यकी प्रयोजनीयता (*Purpose*)।

खाद्य प्रधानतः चार भागोंमें विभक्त है।—(१) क्षय-निवारण, (२) वृद्धि करण (growth) (३) ताप पैदा करना (production of heat), (४) तेज और बल का उत्पादन।

सभी तरहके भोजन शरीरके कितने ही यन्त्र और पाचक रसकी सहायतासे एकदम बदल जाते हैं और इस तरह बदलकर शरीर रक्षाके लिये उपयोगी हो जाते हैं। इसके पहले ही उन सब यन्त्रोंके (पाकस्थली, आँते, यकृत क्लोम वगैरह) विषयमें संक्षेपमें लिख दिया गया है। जीभ, दाँत, ग्रन्थियाँ वगैरहसे लार, अन्ननाली, आमाशय वगैरहका निःसरण (Secretion) आवश्यक होता

खाद्योज (Vitamin) ।

यह वह सूक्ष्म पदार्थ है जो भोजनके पदार्थों में पाया जाता है और जिसका काम यह है, कि शरीरमें जाकर शरीरकी समस्त क्रियाओं को उत्तेजित करे। इसके बिना हमारा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। हड्डी और दांतों में खराबी आ जाती है। शरीरकी बाढ़ ठीक नहीं रहती, और पवित्रताकी रक्षा नहीं होती।

अबतक ५ प्रकारके खाद्यों का आविष्कार हुआ है।

खाद्योज १ के गुण।

खाद्योज न० १ ।—यह भोजनमें घुल जाती है। यदि भोजन थोड़ी देरतक पकाया जाये तो वह नष्ट नहीं होती। पर बहुत देरतक खुली हवामें भोजनके पदार्थ पकते रहनेपर वह नष्ट हो जाती है। जैसे, बहुत देरतक तरकारीको भूनना, रबड़ी या मलाई बनाना।

खाद्योज न० १—हमें संक्रामक रोगों से बचाने और उसका आक्रमण होनेपर उससे मुकाबला करनेकी शक्ति देता है। इससे हमारी त्वचा और श्लैष्मिक झिल्लियाँ सुदृढ़ होती हैं, वे रोगाणुओं के आक्रमणसे बचती हैं। जब खाद्योज न० १ शरीरमें घट जाता है तो ऐसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं, जिनसे रातमें दिखाई नहीं देता।

हमलोगोंको यह खाद्योज वनस्पतियों में मिलती है। हमलोग जो शाक सब्जी खाते हैं, उनसे इसे हमलोग प्राप्त करते हैं। पत्तों और कोंपलोंकी अपेक्षा पौधोंके बीजोंसे यह कम पायी जाती है। साथ ही वे तरकारियां जो कन्दके रूपमें पैदा होती हैं, उनमें कम पायी जाती है। पर गाजर, शकरकन्द, आलू, शलगम, चुकन्दर, मूली इत्यादि चीजोंमें कुछ अधिक रहती है।

नीचे लिखे पदार्थों में खाद्योज १ बहुत मिलता है।

मछलीके यकृतका तेल, अण्डेकी जर्दी, मक्खन, घी, प्राणियोंके यकृत, गुर्दे, बकरेकी चर्बी, दूध, मलाई, लेटूस, करमकल्ला, इत्यादि पत्तोंवाली तरकारियां। गाजर, शकरकन्द, टोमैटो, मकई, कलेल आदिमें यह बहुत है।

परन्तु मक्खन निकाला दूध, दाल, चना, मटर, सेम, जई, जौ, नारियलका तेल, नारङ्गीका रस, शहद, चावल, प्याज, आलू, आदिमें कम है।

मैदा, चमकाया हुआ चावल, सरसोंका तेल, बादाम का तेल, कोकोजेम, और वनस्पतिके घीमें बिलकुल नहीं रहती।

खाद्योज २। (Vitamin 2)

यह भी अत्यन्त उपकारी है। यह पानीमें घुलनेवाली होती है। इससे मस्तिष्क, नाड़ियां, हृदय, यकृत, पाचन ग्रन्थियां, ऐच्छिक मांसपेशियां, और आंतोंके अनैच्छिक मांसमें बहुत ताकत आती है। जब यह नहीं मिलता तो

बेरी बेरी रोग हो जाता है, हृदय कमजोर हो जाता है और पैरोंपर वातका आक्रमण हो जाता है।

यह भी हमलोग वनस्पतिवर्गसे ही प्राप्त करते हैं। यह अनाजोंके बाहरी भागमें मिलती है। मैदामें नहीं रहती, खूब चमकायें चावलमें भी नहीं रहती। चावल पसाकर माड फेंक देनेसे भी इसका अधिक अंश माडके साथ चला जाता है।

वे खाद्य जिनमें यह खूब मिलता है।

टोमाटो, सिलेरी, अखरोट, अण्डा, खमीर, पलाकी, शलजम, मूलीके पत्ते, जौ, मकई, बाजरा, जई, सेम, लोमिया, मटर, दाल, चना, तीसी, गेहूँका मोटा आटा।

पर श्वेत डबल रोटी, सफेद चावल, केला, पपीता, सतरे नीबू, चाय, काफी, मैदा, श्वेत सार, वनस्पतिके तेल, और शक्करमें यह नहीं मिलती।

खाद्योज २।

गुण।—जलमें यह घुल जाती है। ज्यादा ताप मिलनेसे नष्ट हो जाती है। इससे रक्त शुद्ध रहता है, खराब होना रुकता है। जब शरीरमें यह कम हो जाता है तो मसूड़े खराब हो जाते हैं। सूज जाते हैं। दांत मजबूत नहीं रहते। आंतें ठीक काम नहीं करती और रोग नाशक शक्ति घट जाती है।

कैसे मिलती है।—यह प्राय सब तरकारियों और फलोंमें पायी जाती है। करमकल्ला, पालक, मटर, चना, नेबू, नारङ्गीके ताजे पत्तोंका रस, टोमाटो, गाजर, लेटूस, सलजमके पत्ते, आलू, सेम, लोबिया, शकरकन्द, अननास, परीपा आदिमें बहुत मिलती है।

पर पतला गोश्त, बकरा, सोया, सेम, जव, माटा, मैदा, मकी, बाजरा, सूखा मटर, सेम, दाल, चना, शकर, शहद, खमीर, वनस्पतियोंके तेल सब तरहके सूखे फल, गिरियां, शीतमें बिकनेवाले फल, डब्बोंका दूध, इनमें बिलकुल नहीं है। पर दूध मक्खन निकाला दूध, मठा, दही, जौ, जई कच्चो चुकन्दर, कच्ची गाजर, गोभी, प्याज, तरबूज आदिमें कम रहती है।

खाद्योज 4 (Vitamin 4)।

गुण।—इससे हड्डी और दांत मजबूत होते हैं। इसके कम हो जानेपर बच्चोंको रिकेट्स रोग हो जाता है। हड्डियां कोमल हो जाती हैं। बच्चा चिड़चिड़ा हो पड़ता है, नींद कम आती है। बच्चा जल्दी चलना फिरना नहीं सीखता, दस्त साफ नहीं आते, दांत देरसे निकलता है और पैरकी हड्डियां टेढी पड़ जाती हैं। चूना (कैलसियम) और फासफोरसकी कमी या फास्फोरसकी अधिकता और चूनेकी कमी—ये सब रिकेटसके कारण हैं।

कैसे मिलती है ।—यह दूध, घी, मक्खन और मछलियोंके तेलमें खूब मिलती है। सूर्यका प्रकाश जब हमारी त्वचापर पड़ता है, तो उसकी उल्टा वायलेट किरणोंके प्रभावसे यह खाद्योज हमारी त्वचामें तैयार हो जाती है। इसीलिये, शरीरको नङ्गा रखकर धूप खाना बहुत लाभदायक है। बच्चोंके शरीरमें तेल लगाकर उनको थोड़ी देर धूपमें लिटा रखना बहुत जरूरी है। इससे खाद्योज ४ उनमें प्रवेश करती है।

खाद्योज ५ (Vitamin 5) ।

गुण ।—यह जब शरीरमें घट जाता है तब स्त्री और पुरुष कमजोर हो पड़ते हैं। उनमें गर्भ धारणकी शक्ति नहीं रहती।

कैसे मिलती है ।—लेटूस, गोश्त, अण्डे, जानवरों का गुर्दा, यकृत, सालिम गेहूँ, गेहूँका भ्रूण इनमें खूब मिलती है, पर दूधमें यह कम रहती है।

जब शरीरमें खाद्योजोंकी कमी हो जाती है, तो भांति भांतिके कीटाणुजनित रोग, जुकाम, न्युमोनिया, बेरीबेरी, श्लेष्मा, स्कर्वी, रिकेट्स, बन्ध्यत्व आदि कितने ही रोग पैदा हो जाते हैं। इसलिये इस बातपर पूरा ध्यान रखना चाहिये कि खाद्योज पूरी मात्रामें प्राप्त होता है। प्रति दिन थोड़ी देरतक नङ्गे बदन धूपमें बैठना चाहिये। तरकारियोंके पत्ते,

साग आदि अवश्य खाना चाहिये। उनसे खाद्योजके अलावा लोहा, फास्फोरस, चूना आदि होता है। इससे बहुत लाभ होता है। ज्यादा पकानेसे खाद्योज नष्ट हो जाता है। इस कारण बिना उबाले या पकाये ही फल खाना अच्छा है।

खाद्यका गुण (Quality of food)।

जान्तव या उद्भिदसे उत्पन्न अण्डलाल-मिला भोजन परिवर्त्तन करनेसे जीवन धारण किया जाता है। दन्तकी अवस्था और अन्न-नालीकी अवस्था परीक्षा करनेसे समझा जाता है कि मनुष्य आमिष भोजी जीव है (carnivorous animal)।

एक मनुष्यके लिये या किसी छात्र-जीवनके लिये नित्य जिस खाद्यको जरूरत होती है, नीचे उसका उल्लेख किया जाता है —

चावल	२॥ अढाई छटाक
दाल	१ छटाक
मछली या मांस	३ छटाक ⅓
आलू वगैरह	५ छटाक
मैदा	४ छटाक
सूजी	१ छटाक

घी या तैल	· ३/४ "
चीनी	·· १/२ "
दही	· २ "

इस इतने खाद्यमें ३०० ग्रेन नाइट्रोजेन, ४५०० ग्रेन कार्बन और ३००० ग्रेन कैलरि शक्ति मिलती है।

एकबार अधिक भोजन न कर, बार बार और थोड़ा थोड़ा भोजन करना चाहिये।

रातमें थोड़ा भोजन स्वास्थ्य-प्रद होता है।

हमेशा व्यवहारके कई खाद्य।

दूध।—यह हमलोगोंका सबसे बढ़िया और आदर्श खाद्य है। इसका दूसरा नाम बाल-जीवन है। एकदम शिशुके लिये स्तनका दूध ही सबसे उत्तम होता है। बकरीका दूध हलका, ठण्डा होता है और मलका पतलापन दूर कर देता है। यदि गायका दूध पीना हो तो आध पाव दूधमें एक ड्राम दूधकी चीनी, यह न हो सके तो चीनी या मिश्री वगैरह मिलाकर वह माताके स्तन-दुग्धके बदले व्यवहार किया जा सकता है। बच्चा जब छ: महीनेसे ऊपरका हो जाये तो उसे पानी मिलाकर दूध पिलाना चाहिये। जिसका बच्चा बहुत छोटा हो या जिस गायके बच्चा न हो, उससे त्रिदोष पैदा हो जाता है। जितनी ही उम्र बढ़ती जाती है, उतना ही गो-दुग्धका आदर बढ़ता जाता है।

इसका आपेक्षिक गुरुत्व १०३० और सैकड़े १२½ भाग कठिन पदार्थ और बाकी पानी रहना उचित है। केवल दूध न पीकर उसके साथ चूड़ा, धानका लावा या भात मिला कर खानेसे वह सहजमें ही पच जाता है। बच्चोंका यकृत बढ़ जानेका मूल कारण दूषित दूध पीना है। डिब्बोंमें बन्द दूध बहुत हानिकर होता है।

मछली।—जीवित मछली ही खाने योग्य है। रुई, कातला, बाचा, मौरूला, मागुर वगैरह मछलियां जल्दी पचती हैं और उनके भोजनसे ताकत भी आती है। चिंगड़ी मछली वास्तवमें मछली नहीं है, इसलिये, वह जल्दी पचती भी नहीं। इलिस मछलीमें तेलका भाग अधिक रहता है। मांस या अण्डेकी तरह मछली अधिक पक जानेपर उसके भीतरका छाना जातीय उपादान या ऐल्बुमेन जातीय उपादान कड़ा हो जाता है और वह मुश्किलसे पचता है। बहुत कम भूनकर मछलीका शोरवा अच्छा होता है। यह जल्दी ही पच जाता है और मस्तिष्कमें बल प्रदान करता है। यह भूल धारणा है कि मछलीमें फास्फोरस रहता है।

टीनमें बन्द मछली कितनी ही बार बिगड़कर विषैली हो जाती है। जहां मानसिक परिश्रम अधिक होता है, पर शारीरिक परिश्रम कम होता है वहां मक्खन जातीय खाद्यका परिमाण घटाकर थोड़ी मछली और छाना ... भोजन करना चाहिये।

मांस।—यह एक सारवान पदार्थ या खा
इसका गुण उत्तेजक और संकोचक है। रोगी जन्तुक
न खाना चाहिये।

बकरेके मांसमें यक्ष्मा रोगके बीज नहीं रहते।
लिये अन्य जीवोंके मासकी अपेक्षा बकरेका मास
प्रशस्त मना गया है। मासमें यदि अधिक चर्बी
मोटे-ताजे शरीर वाले मनुष्योंको न खाना चाहिये।

मासके साथ ज्यादा घी या मसाला खाना गुरुपा
जाता है और वह जल्दी नहीं पचता। मछली और
पर मक्खी न बैठे, इसका पूरा बन्दोबस्त रखना चा
मुरगीके मासमें छाना जातीय उपादान अधिक है और
कम रहती है।

डिम्ब।—अण्डा एक पुष्टिकर पदार्थ है। क
अपेक्षा अधपका अण्डा जल्दी पच जाता हैं। पर अधिक
तक सिझानेपर यह गुरुपाक हो जाता है। पानीके
थोड़ा नमक मिलाकर उसमें अण्डा डुबो देनेपर जो अण्डा
जाये, समझना चाहिये कि वह अभी बिगड़ा नहीं है। अ
छाना जातीय और मक्खन जातीय उपादान यथेष्ट परिमा
रहते हैं, इसीलिये, विद्यार्थियोंको इससे लाभ होता है।

दाल।—यह अच्छी तरह न सीझनेपर जल्दी
पचती। दालको सिझाते समय उसे घोटते रहना चाहि

अलग न रह जाये। मूंगकी दाल रोगियोंके लिये सुपथ्य है। मसूरमें छाना जातीय उपादान अधिक रहते हैं। सब दालोंकी अपेक्षा मसूरकी दाल और चनेकी दाल अधिक सारवान और गुरुपाक रहती है। केवल गरमीके दिनोंमें उडदकी दाल खानी चाहिये। निरामिष भोजियोंके लिये भात और यदि सहन हो तो रोटीके साथ दाल खाना उचित है। दाल और चावल मिलाकर खिचड़ी तैयार होती है। इसमें भातका सार भाग कुछ भी नष्ट नहीं होता। इसलिये, यह एक सारवान पदार्थ है और इससे इसका स्वाद बढ़ता है।

चावल।—भात, फरई, च्यूड़ा और कितने ही जाती चावल भारतवासियोंके प्रधान खाद्य हैं। चावलमें शर्करा जातीय पदार्थका अंश ही अधिक है। छाना मक्खन जातीय उपादान बहुत कम परिमाणमें रहता है। इसीलिये भात तेल, दूध मिलाकर भोजन तैयार करना चाहिये। भात माड़ पसा देनेसे भोजनका सार भाग चला जाता है। और धानका लावा, ये भातकी अपेक्षा अधिक सारवान है।

मैदा, आटा।—भारतके पश्चिम प्रान्तके रहनेवाले आसाम और कलकत्तेके पासके स्थानके रहनेवाले तीसरे पहर या रातमें मैदा या आटेकी रोटी खाते हैं। हाथकी रोटीकी अपेक्षा पाव रोटी जल्दी पच जाती है।

अच्छी तरह तली हुई पूरी, रोटीकी अपेक्षा जल्दी पचती है। क्योंकि पूरीमें छाना जातिका उपादान कुछ अधिक है। सूजी, मैंदा और आटेकी अपेक्षा अधिक पुष्टिकर पदार्थ हैं।

गोल आलू।—इसका छिलका निकालकर सिझाकर खाया जाता है तो इसका पौष्टिक गुण घट जाता है। छिलका समेत उबाला हुआ आलू छीलकर राँधे हुए आलूकी अपेक्षा जल्दी पच जाता है। इसमें पाकरस पदार्थ रहनेके कारण इसको विशेष पौष्टिक तरकारी होती है।

तरकारी।—फूलगोबी, बाधागोबी, बैंगन, परवर, कद्दू, कच्चाकेला, कच्चू, मटर, पपीता, केलेका फूल, शकरकन्द वगैरहमें तेज पैदा करनेवाला नौ अंश पानी और बाकी अंश मक्खन और छाना जातीय उपादान रहता है। कच्चा पपीता मासके पाचनमें बहुत सहायता पहुँचाता है।

करैली करेला पित्त निकालनेवाला है। यह बहुत लाभदायक है। नेबू, इमली पाचन क्रियामें सहायता पहुँचाती है, फल मूलमें नारियल और केला बहुत ही पुष्टकर है। बादाम, खजूर, चीना बादाम वगैरह भी बहुत पुष्टिकर हैं। इनमें २० भाग छाना और ४० भाग मक्खन जातीय पदार्थ रहता है। इसके अलावा चीनी भी ८० भाग रहती है।

उपसंहार।

पहले ही कहा गया है कि शरीरके विषयमें जितना ही अधिक ज्ञान रहता है, चिकित्सामें उतनी ही सुविधा

होती है। यह भी पहले ही कहा जा चुका है कि शरीरके यन्त्र सब अलग अलग रहनेपर भी वास्तवमें अलग नहीं हैं अर्थात् फेफड़े, हृत्पिण्ड और मस्तक आदि शरीरके सभी यन्त्र आपसमें एक दूसरेकी सहायताकर सारे शरीरको लाभ पहुँचाया करते हैं। अतएव, केवल हड्डी, पञ्जरा, रक्तमांस और शिराओंके सम्बन्धमें जाननेपर, शरीरके सम्बन्धमें पूरा ज्ञान नहीं होता। अतएव, हमलोगोंको हमेशा याद रखना चाहिये कि जीवन्त शरीर ही चिकित्सकोंका ज्ञातव्य और आलोच्य विषय है। यदि शरीरका कोई एक भी यन्त्र बिगड़ जाता है तो कुछ न कुछ समूचे शरीरमें विकार पैदा हो जाता है। अर्थात् देह विकलाङ्ग हो पड़ता है। इसलिये देहमें विकार पैदा हो जानेपर देहमें विकार होना भी अवश्यम्भावी हैं। जरा डूबकर देखनेसे मालूम हो जाता है, कि देहीके रोगी हुए बिना देह कभी रोगिनी हो ही नहीं सकती। अर्थात् देही जब बीमार हो जाता है, तब रोगके आकारमें उसकी बीमारी बाहर मालूम होती है। यह बहुत ही सत्य है कि पहले देही बीमार होता है और इसके बाद वही अस्वस्थता शरीरपर दिखाई देता है। इसलिये जब शरीरके किसी भी अंशमें रोग हो जाता है, तो किसी खास यन्त्र या समूचे शरीरकी चिकित्सा या रोगकी चिकित्सा न कर रोगीकी चिकित्सा करना ही कर्त्तव्य है। देह जीवात्मा (Vitality) और मनसे ही मानव जीवन बना हुआ है। इसीलिये मनुष्यको रोग होनेपर उस

की छाया मन और शरीर दोनोंपर ही हुआ करती है। जो केवल शरीरकी चिकित्सामें लगे रहते हैं, वे मनको छोड भी दे सकते हैं। परन्तु जो देहीका इलाज करते हैं, वे किसी तरह भी मनको नही छोड सकते। इसलिये, यथार्थ होमियोपैथिक चिकित्सक शरीर और मन दोनोंको ही साम्य भावसे देखकर रोगीकी चिकित्सा किया करते हैं। इसके अलावा मन और शरीरमें बहुत अधिक घनिष्टता रहती है—इसे सभी मानते है। मानसिक परिवर्त्तनके साथ शारीरिक परिवर्त्तन और शरीरके परिवर्त्तनके साथ मानसिक परिवर्त्तन अवश्य ही हो जाता है।

केवल शरीर तत्व और मनस्तत्व माननेपर रोग अच्छा नही हो जाता। नीरोग रहनेके लिये स्वास्थ्य नीतिका पालन करना अत्यन्त आवश्यक है। स्वास्थ्यनीतिके सम्बन्धमें नीचे लिखे विषयोंपर ध्यान रखना बहुत आवश्यक है।

स्वास्थ्यरक्षा-प्रणाली।

स्त्री हो या पुरुष दोनोंको ही स्वास्थ्य रक्षापर विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। स्त्री-पुरुषोंकी सम्मिलित एक जाति है—उसी जातिका आधा अङ्ग शुष्क रहनेपर उस जातिकी भरपूर उन्नति किस तरह होगी।

बीसवी शताब्दिमें समस्त संसार तेजीसे सभ्यताकी ओर अग्रसर होता चला जाता है। बीसवीं शताब्दिमें,

आज भी बङ्गदेशकी बहुएँ अन्तःपुरमें आवद्ध रहती हैं। इस तरह दिनोदिन उनका स्वास्थ्य खराब होता जाता है। उनके भाग्यमें मानो निर्मल वायुका सेवन बदा ही नहीं है। सभी पारिवारिक कार्य स्त्रियोंको ही करने पड़ते हैं। इसके अलावा गर्भ धारण, शिशु-पालन, भोजन तैयार करना, अतिथि और रोगीका सेवासत्कार करना, देव द्विज और गुरुजनोंकी सेवा तथा भक्ति—ये सभी भार स्त्रियोंपर ही है। लड़कपनसे आजकल शिक्षाका जो एक आन्दोलन चल रहा है, उससे स्त्रियोंका स्वास्थ्य क्रमशः नष्ट होता जाता है। बालकोंकी भी यही अवस्था है। बहुत थोड़ी उमरमें पिता-माताकी ताड़नासे सवेरे उठकर ढेरकी ढेर किताब सामने रख ८-१० बजेतक मानसिक वृत्तियोंके परिचालन और उसके बाद ही जरा तेल साबुन लगाकर और थोड़ा पानी ढालकर (तेल मलना नहीं या अच्छी तरह शरीर रगड़ना नहीं) स्नानकर लेना और पानी पोछते पोछते बिना चबाये जल्दीसे भोजन, इसके बाद ही दौड़ते दौड़ते स्कूल, कालेज या आफिस जाना, लगातार छ सात घण्टे मानसिक परिश्रम करना, इसके बाद ही सन्ध्याको फिर पढ़ना आरम्भकर देना और रातमें गुरुपाक भोजनके बाद सोना—व्यायामका और भ्रमणका समय ही नहीं मिलता।

ये सब बालक जब यौवनमें पदार्पण करते हैं उस समय इन्द्रिय परिचालना जनित दुष्परिणाम पैदा होकर—स्वास्थ्य एकदम बिगड़ जाता है। परिणाम यह होता है

कि उन्हें अम्ल, अजीर्ण तथा यक्ष्मा रोग पीट हो जाता है। इन बच्चोंपर ही देशका भविष्य निर्भर रहता है, उनके स्वास्थ्यकी ओर यदि इसी तरह ध्यान न दिया जायगा तो देशके भविष्य और भावी उन्नतिकी आशा कैसे की जायगी।

बालिकाओंकी भी ठीक यही अवस्था है। विवाहके पहले उन्हें घरके काम काजकी शिक्षाके बदले आजकल बालिका विद्यालयके पुरस्कारका ही विशेष प्रलोभन रहता है।

श्रम करना ही जीवन है। जो परिश्रम नहीं करते या जो आलसी रहते हैं, वे इस जीवन-संग्राममें विजयी नहीं हो सकते। हमारे यहाँ पचास वर्ष पहले जो नियम प्रचलित थे, उससे गृहस्थी बहुत ही सुख-भरी थी।

गृहलक्ष्मियोंका सवेरे उठना।—घरका काम काज करनेमें शरीरको हिलाना पड़ता है। पतिपुत्रको भोजन करानेके लिये रसोई बनानी पड़ती है, इसलिये, विलास क्या चीज है ये वे नहीं जानती थीं, वे उत्तम फल पैदा करती थी। स्वस्थ पुत्र और कन्याओंका मुंह देख कर सुख भोग करती थी और स्वास्थ्य-पूर्ण जीवन बिताती थी, ऐसे परिवार या गृहस्थीमें स्वर्गका आभास पाया जाता है।

इस समय भी नीचे लिखे विषयोंपर दृष्टि रखनेसे फिर भी गृहस्थी सुखमयी हो सकती है और उसमें आनन्दके फव्वारे छूट सकते हैं।

लड़का हो या लड़की।—सबके लिये, सवेरे उठना जरूरी है। ऐसा अभ्यास करना चाहिये कि सूर्य-

देव तुमको सोया हुआ न देख ले। तुम सूर्यदेवको उठते देखो। धूपकी किरण निकलनेके पहले पवित्र और वेमेल आक्सिजिन या प्राणशक्ति देनेवाली भाफ सूंघनेसे तुम्हारा मन पुलकित और शरीर तेज तथा शक्ति-सम्पन्न होगा। कुमारियो या युवतियोको घरका काम काज करनेसे व्यायामका काम होता है। बालक और बालिकाएँ घूम फिरकर तथा प्रौढा गङ्गा स्नानकर अपनी भूखकी वृद्धि करें।

ऊपर लिखे नियमोंका पालन करते हुए, युवक युवतियां यदि दिनाचारसे रहें तो इसमें सन्देह नहीं कि वे स्वस्थ सन्तानका मुँह देखकर प्रसन्न होंगी।

साफ सुथरे रहना।—क्या लड़के और क्या लड़कियाँ—दोनो ही के लिये साफ सुथरे रहना आवश्यक है। जिसका घर दरवाजा साफ नही रहता, वहाँ कीड़े मकोड़े तथा नाना प्रकारके भयङ्कर कीटाणु भरे रहते हैं। हैजा, टाइफायड वगैरह रोगोंके जीवाणुसे हमेशा हमारी रहनेकी जगहका वायुमण्डल भरा रहता है। जहाँ गन्दगी मिली वहाँ उन्होंने अपना वंश बढाना आरम्भ किया। अतएव, सहज में ही रोगका आक्रमण होनेकी सम्भावना बनी रहती है। यदि हमेशा साफ सुथरे रहा जाय तो वे सभी कारण दूर हो जाते हैं और इच्छानुसार स्वास्थ्य सुख प्राप्त होता है।

और भी एक विषय है अर्थात **गर्भावस्थामें** किस तरह गर्भिणीका संरक्षण करनेसे अच्छी सन्तान

सकती है। गर्भके पहले कई महीनेतक गर्भिणीको अपने अङ्गोंको परिचालनकर स्वामी वगैरह गुरुजनोंकी सेवा करनी चाहिये। पूर्ण गर्भके समय देवी-देवताओंकी सेवा, धर्म-ग्रन्थोंका पढना, परिश्रम करनेके बदले थोडा टहलकर अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करना चाहिये। इससे सरलतासे सन्तान पैदा होगी और प्रसवमें किसी तरहकी तकलीफ न होगी।

सबसे पहले, गुरुजनोंके भी पहले, देवता की सेवा या आराधना करनी चाहिये।—भगवान की कृपा होनेपर लङ्गडा पहाड लांघता है। असम्भव सम्भव हो जाता है और गृहस्थी सुखका आगार बन जाती है। इसके बाद अपनेसे बडोंकी सेवामें मन लगाकर उनका आशीर्वाद ग्रहण करना चाहिये। उनके आशीर्वादसे गृहस्थीमें शान्ति पैदा होगी, धन और पुत्रसे फली फूली रहेगी।

अपनेसे बडोकी और स्वामीकी सेवा।—यह स्त्रियोंके लिये बहुत ही आवश्यक कर्त्तव्य है। मध्यवित्त गृहस्थोंके घरकी अधिकारिणी गृहलक्ष्मियाँ ही होती हैं। अपने हाथों पवित्र मनसे रसोई बनाकर पति पुत्रोंको जिस घरमें भोजन कराया जाता है, उस घरमें विमल आनन्दका सोता बहा करता है।

सन्तान पालन स्त्रियोंका आवश्यक कर्त्तव्य है। दास दासियाँ उनका इतना यत्न और आदर नहीं कर सकती। पुत्रोंको पहले कई वर्ष तक माता ही सुपुत्र बना सकती

है—इसके बाद पिता या दूसरे अभिभावक। जबतक सुपुत्रों की संख्या नहीं बढ़ती तबतक वह घर मुहल्ला या देश या समाज कभी फलवान नहीं हो सकता—क्योंकि बच्चे ही भविष्यके आशा-भरोसा रहते हैं।

नीचे लिखे कई उपदेश स्वास्थ्य रक्षाके बहुत बड़े सहायक हैं। इसीलिये, ये नीचे लिख दिये जाते हैं —

(क) जिसका पाकाशय और हृत्पिण्ड कमजोर हो, व्यायाम नुकसान पहुँचाता है।

(ख) थके रहनेपर कभी भोजन न करना चाहिये।

(ग) भोजनकी सारी चीजें खूब सिझायी होनी चाहिये।

(घ) भोजनके पदार्थ धीरे धीरे खूब चबाने चाहिये।

(ङ) रोगीके आराम करनेकी, चेष्टा रोगी और उसके घरवाले न करें तो केवल चिकित्सककी चेष्टासे कुछ नहीं होता।

(च) खानेका कमरा सबसे बढ़िया और ऐसा चाहिये कि उसमें हवाका आवागमन रहे।

(छ) रोगका होना रोकना, उसको आराम करनेकी अपेक्षा उत्तम है।

(ज) सबेरे उठकर शौच आदि क्रिया पहले करनी चाहिये और वस्त्र आदि बदले बिना कोई काम न करना चाहिये।

(झ) पाश्चात्यके हिसावसे हमलोगोंको आहार विहार न करना चाहिये। दोपहरके समय, एक पहरके बीचमें, और दो पहर बीत जानेपर न करना चाहिये।

(ञ) रातका एक प्रहर बीतते ही भोजन कर लेना चाहिये।

(ट) भर पेट भोजनकर लेनेपर ज्यादा जलकी चीजें न पीनी चाहियें। अजीर्णवाले रोगियोंको नियमसे पानी पीना चाहिये।

(ठ) दुबले आदमी थोड़ा पानी पीते हैं, शरीरके शोधन के लिये पानी पीना बहुत जरूरी है।

(ड) नित्य एक ही तरहका भोजन प्रकृतिको नहीं रुचता।

(ढ) शारीरिक दुर्बलताका कारण है इस देशके अधिवासियोंको भर पेट भोजन न मिलना।

(ण) सैन्धव और पांगा ही विशुद्ध नमक होता है। गृहस्थोंके लिये इनको ही व्यवहार करना चाहिये।

(त) ब्राण्डी, वाइन, बियर—आदि नशीली चीजें मनुष्य शरीरके लिये ज़हरकी तरह समझना चाहिये।

(थ) पानीकी तरह विशुद्ध पीनेकी चीज़ दूसरी नहीं है।

(द) सिगरेट पीना (इसमें निकोटिन विष रहनेके कारण) बहुत नुकसान करनेवाला और स्वास्थ्यको नष्ट करने वाला है।

(४) अफीम।—यह विषैला पदार्थ कभी व्यवहा करना उचित नहीं है। काफी इसका बहुत उत्त प्रतिषेधक है।

अजीर्ण रोगियोंके प्रति उपदेश।

दवाओंकी अपेक्षा पथ्य और आनुसङ्गिक नियमोंका पालन ही इससे बचनेका सबसे श्रेष्ठ उपाय है।

धीरे धीरे चबाकर भोजन करना चाहिये।

भोजनके समय ज्यादा पानी पीना मना है।

पतली चीजें या पानीय द्रव्यकी अपेक्षा कड़ी चीजें जल्दी पचती हैं।

भोजन बहुत ठण्ढा या बहुत गर्म न होना चाहिये।

जरूरतसे ज्यादा भोजन न करना चाहिये।

दिन रातमें दो बारसे अधिक न खाना चाहिये।

दोनों शामके भोजनके सिवा, और कुछ थोड़ासा भी न खाना चाहिये।

बहुत थक जानेपर भोजन न करना चाहिये।

जहाँतक सम्भव हो, भोजनका समय बधा होना चाहिये।

भोजनके समय, स्वस्थ चित्तसे और प्रफुल्ल मनसे भोजन [illegible]हिये।

[illegible] -अगको अच्छी तरह साफ रखना चाहिये।

(झ) पाश्चात्यके हिसाबसे हमलोगोंको आहार विहार न करना चाहिये। दोपहरके समय, एक पहरके बीचमें, और दो पहर बीत जानेपर न करना चाहिये।

(ञ) रातका एक प्रहर बीतते ही भोजन कर लेना चाहिये।

(ट) भर पेट भोजनकर लेनेपर ज्यादा जलकी चीजें न पीनी चाहिये। अजीर्णवाले रोगियोंको नियमसे पानी पीना चाहिये।

(ठ) दुबले आदमी थोड़ा पानी पीते हैं, शरीरके शोधन के लिये पानी पीना बहुत जरूरी है।

(ड) नित्य एक ही तरहका भोजन प्रकृतिको नहीं रुचता।

(ढ) शारीरिक दुर्बलताका कारण है इस देशके अधिवासियोंको भर पेट भोजन न मिलना।

(ण) सैन्धव और पागा ही विशुद्ध नमक होता है। गृहस्थोंके लिये इनको ही व्यवहार करना चाहिये।

(त) ब्राण्डी, वाइन, बियर—आदि नशीली चीजें मनुष्य शरीरके लिये ज़हरकी तरह समझना चाहिये।

(थ) पानीकी तरह विशुद्ध पीनेकी चीज़ दूसरी नहीं है।

(द) सिगरेट पीना (इसमें निकोटिन विष रहनेके कारण) बहुत नुकसान करनेवाला और स्वास्थ्यको नष्ट करने वाला है।

(४) अफीम ।—यह विषैला पदार्थ कभी व्यवहार करना उचित नहीं हैं। आफो इसका बहुत उत्तम प्रतिषेधक है।

अजीर्ण रोगियोंके प्रति उपदेश ।

दवाओंकी अपेक्षा पथ्य और आनुषङ्गिक नियमोंका पालन ही इससे बचनेका सबसे श्रेष्ठ उपाय है।

धीरे धीरे चबाकर भोजन करना चाहिये।

भोजनके समय ज्यादा पानी पीना मना है।

पतली चीजें या पानीय द्रव्यकी अपेक्षा कड़ी चीजें जल्दी पचती हैं।

भोजन बहुत ठण्डा या बहुत गर्म न होना चाहिये।

जरूरतसे ज्यादा भोजन न करना चाहिये।

दिन रातमें दो बारसे अधिक न खाना चाहिये।

दोनों ग्रासके भोजनके सिवा, और कुछ थोड़ासा भी न खाना चाहिये।

बहुत थक जानेपर भोजन न करना चाहिये।

जहाँतक सम्भव हो, भोजनका समय बँधा होना चाहिये।

भोजनके समय, स्वस्थ चित्तसे और प्रफुल्ल मनसे भोजन करना चाहिये।

शरीरके प्रत्येक अंगको अच्छी तरह साफ रखना चाहिये

शरीरका क्लेद नित्य नियमित रूपसे निकल जाये, उस विषयपर दृष्टि रखना चाहिये। शरीरका यह क्लेद मल, मूत्र और पसीनेके रूपमें बाहर निकल जाता है, इसीलिये पसीना रोकना या मल मूत्रका वेग रोकना उचित नहीं है। इसके विपरीत करनेसे शरीरका रक्त दूषित हो जाता है। शरीरका ऊपरी भाग अर्थात त्वचाका साफ रखना भी बहुत जरूरी है। मैले कपडे पहनना या मैले बिछावनपर सोना उचित नहीं। रहनेके मकानके चारो ओर खूब सफाई रखनी चाहिये। गन्दी जगह हमेशा त्याग देनी चाहिये। पहले ही कहा जा चुका है कि हवा प्राण स्वरूप है। इसीलिये, विशुद्ध वायुका सेवन ही बहुत आवश्यक है। खानेकी चीजें भी साफ सुथरी रहनी चाहिये। बासी या सडी चीज खानेसे बीमार पड जानेकी सम्भावना रहती है। खाद्य पदार्थ हमेशा ढँककर रखना चाहिये। मक्खी मच्छड या किसी तरहका कीडा मकोडा बैठनेपर उनमें बहुत तरहके रोग पैदा हो जानेकी सम्भावना रहती है। हमेशा साफ पानी पीना और व्यवहार करना चाहिये। दूषित पानी पीनेसे कितनी ही बार बहुत भयङ्कर रोग हो जाया करते हैं। शरीर, मन और इन्द्रियोंका नियम पूर्वक परिचालन करना स्वास्थ्य देता है और बहुत ज्यादा परिचालन या उनसे बिलकुल ही काम न लेनेपर उनमें गडबडी पैदा हो जाती है। नशा पीना, रातमें जागरण, बहुत मैथुन हमेशा त्याग देना चाहिये।

हैजा, चेचक, महामारी, यक्ष्मा, इन्फ्लुएञ्जा वगैरह रोग संक्रामक रहनेके कारण प्रायः व्यापक रूपमें प्रकट होते हैं। कितने ही अलग अलग जीवाणुओंसे अलग अलग रोगोंकी उत्पत्ति होती है। ये सब जीवाणु या छोटे कीड़े दुर्बल देहपर सहजमें ही आक्रमण करते हैं और रोग पैदा कर देते हैं। ये जीवाणु भोजनकी सामग्री या मांसके साथ तथा और भी कितनी ही तरहसे जब पेट और फेफड़ेमें पहुँच जाते हैं तो शरीरके सब खूनको खराब कर डालते हैं और इसी तरह हैजा वगैरह बीमारियाँ हुआ करती हैं। पानी जमीन, हवा और आकाश—अर्थात विश्वब्रह्माण्डमें सभी जगह जीवाणुका दलका दल मौजूद रहता है। पर इनमें कितने ही शरीरके लिये हानिकारक और कितने ही हितकारक होते हैं। अनिष्ट करनेवाले जीवाणु मृत देहमें, रोगी शरीरमें, गन्दी जगहोंमें, दूषित पानीमें या हवामें और सड़े हुए जैव पदार्थोंमें बहुत ज्यादा मात्रामें दिखाई देते हैं। इसीलिये, इन सब अनिष्ट करनेवाले जीवाणुओंसे सब को (विशेषकर जिनका स्वास्थ्य भङ्ग हो गया है) उन्हें दूर रखना चाहिये। विशेष विवरणके लिये हमारी प्रकाशित "पारिवारिक चिकित्सा" बारहवाँ संस्करण (विशेषकर परिशिष्ट "ग") देखिये।

औषध-प्रदर्शिका ।

अब हम "औषध-प्रदर्शिका" अर्थात मनोवृत्ति और मस्तकसे पैरतकके सभी अङ्गोंके ऊपर कौन कौन दवाओंकी क्रिया विशेष होती हैं, उसका नीचे उल्लेख करते हैं ।

उपसर्ग । प्रधान दवाएं

मनोवृत्तियां—ऐकोन बेल, ऐनाकार्डियम, आर्निका, एरम, ब्रायो, कैना-इण्डि, ग्रैफा, हाइयो-स, लैके, लाइको, मार्क, नेट्रम, नक्स-म, फास्फो, प्लैटि, पल्स, स्ट्रैमो, विरे-ऐल्ब, जिङ्क ।

संज्ञा (चैतन्य) लोप—ऐण्टि-टार्ट, एपिस, आर्निका, बेलाडो, साइक्यूटा, हेलिबो, हायोसा, ओपियम, स्ट्रैमो, जिङ्क ।

विकार प्रलाप—ऐपिस, आर्निका, हायोसा, बेलाडोना, स्ट्रैमो, जिङ्क ।

मूर्च्छादि रोग—मैग्ने, मार्क, मस्कस, सिलिका, इत्यादि ।

विषाद (Melancholy) **जवानीमे विषन्नता**—ऐसिड-फ्लू ड, नेट्रम, अरम, सिपि ।

स्मरण-शक्ति, बात या अक्षर छोड देता है—एकोन, कैमो, कैलि-ब्रोम, नक्स म ।

मनकी अवस्था या मिजाज-भाव प्रवण (Sentimental)—ऐसिड-फ्लू ड, इग्नेशिया।

स्वाभाविक प्रकृति-गानेकी—बेलाडो, साइक्यु, हायोस, इत्यादि।

जीवनसे विराग—आर्स, अरम, फास, थूजा, लैके, नक्स-वो, सल्फ, वैले।

माथिका—एसक्यूलस, एपिस, आर्सेनिकम, जेल्स, इग्ने, मार्क, नेट्रम-म्यूर, पेट्रोलियम, फास, बैप्टी, सल्फ, आर्निका, विरेवि, सैबाडिला, सैवाइना, सिन्निका, वार्वेस्कम।

सरमें चक्कर आना—आर्निका, व्रायो, इग्ने, फास, सल्फ, टैबे।

सरमें दर्द—ऐसिड म्यू ड, सिनिया, मस्क, सैङ्ग, बेलाडो मार्क, नक्स-म, नेट्र-सल्फ, जिङ्कम।

माथेमे जल सञ्चय—एपिस, वैप्टि, व्रायो, हेलिबो, जिङ्कम।

माथा हिलाना—ऐपिस, वेलोडो, हेलि पोडो, स्ट्रैमो, इत्यादि।

माथेमें चर्म्मरोग—रसटाक्स, ऐनाका, हाइड्रो।

माथेमे फटे घाव—लाइकोपो, जिङ्क, ऐसिड टार्ट।

माथेमे बालोंकी लट बँध जाना—लाइको, जिङ्कम, बेराइटा।

माथेमे पीव भरी फुन्सियां—ग्रैफाइ, सलफर।

माथेमे कितनी हो तरहकी अनुभूति, एकबार मानो फटता फिर बन्द होता है—कैनाबिस-इण्डि, सिमिसि, इत्यादि।

मुख-मण्डल—ऐकोन, ऐण्टिक्रूड, आर्जे-ना, आर्स, वैप्टी, कैम्फ, कार्बो-वेज, जेल्स, फेरम, सिक्केलि, सिपिया, फास्फो।

मुख-मण्डल और कपालमे दाग—ग्रैफाइ, स्ट्रैफेसि।

मानो ललाट और माथेके भीतर मस्तिष्कमे शिथिलता—ऐसिड फास।

मानो ब्रह्मतालु निकल जायगा—कैनाबिस-इण्डि।

माथेके भीतर तरङ्ग या तकलीफ मालूम होना—ग्लोनोयन, सिपि, सल्फ।

माथा हिलता है, आँख बन्द करनेपर—आयोड, ब्रोम, कोनायम।

गरम घरमे प्रवेश करनेपर—आयोड, आर्निका, टैवेकम।

जब डर लगता है—ओपियम।

टकटकी लगाकर देखनेपर—कास्टि, चायना इत्यादि।

कपालकी तरफ—हेलिबोरस, लाइको, फास्फो, बिरे, ऐलूब, जिङ्क।

मसूढा—नेट्रम-म्यूर, मार्क, ऐण्टिम क्रूड, अरम, एसिड-नाई, क्रियोसोटास, फास्फो, साईक्यूटा, हेलिबोरस।

जीभका—टेरिबिन्थिना, सिलिका, रास, पल्स, फास्फो, ओपि, नेट्र-म्यू, मर्क, लाइकोपोडि लके, कैलिबाई, हाईड्रेस्टिस, जेलस एपिस, ऐण्टि-क्रूड ऐसि-म्यू।

जबडेका—ब्राया, हायोस, फास्फो, पोडो।

मुखगह्वर—मार्क हायोस, साइना, बोरैक्स ऐसि म्यू।

आँखका—ऐगारिकस, एपिस, आर्जेनाई, अरम, बेल, साईक्यटा, सिमिसिफ्यूगा, जेल्स, थूफा, हेलिबोरस, हायोस, कै, सिकेलि, स्ट्रैमो।

आँखके कोनेमे जखम—ऐण्टिक्रूड, थूफाई सिलिका, इत्यादि।

आँखमे प्रमेहकी वजहसे प्रदाह—आर्जेण्ट-नाई, हिपर, मार्क, पल्स।

आखमे जलन और करकराहट—आर्स, बेलेडो, बेल, पल्स, सिपि।

आख मैली रङ्गकी—चेलिडो, मार्क, पोडो चायना, इग्नि।

आंख सट जाती है—हिपर, मार्क, पल्स।

आँखकी कनीनिका या उपतारा (Iritis)—थुजे, मार्क-कर, रस टक्स।

आँखके भीतरी पदार्थके कड़ापनकी वजहसे अन्धापन (Glaucoma)—वेलोडो, जेल्स, फाईजस, स्पाईजि।

आँखसे पानी गिरना (Lachrymation)—हिपर, पल्स, सिपिया।

आंखसे आधा दिखाई देना—लिथिया-कार्ब, कैल्क, सल्फ, नेट्रम, इत्यादि।

दूरकी चीज दिखाई देना—कैल्के-कार्ब, कौल्के-सल्फ, साइलि।

दूरकी चीज नहीं दिखाई देना—ऐगारिकस।

कानका—फाइटो, लैके, ऐसि-नाई, चायना, कैलिबाई, हिपर, काफि, कैलि-कार्ब, ऐसिट-क्रुड।

कानके चारो तरफ खसड़ा (Eczema)—आर्स, क्लिमे, मेजे, ग्रैफाईटिस।

कानका विसर्प—ऐपिस, वेलाडो, रसटाक्स, इत्यादि।

कानका मैल—कोना, कास्टिकम, कार्बो-वेज, ग्रैफाई।

कर्णपटहका प्रदाह (Tympanum)—ऐकोन, हिपर, टेल्यू।

कानसे स्राव—पल् स, हिपर, सलफर, टेल्यू।

कानमें दर्द (*Otalgia*)—ऐकोन, बेलेडो, पल् स, कैमो, मार्क, इत्यादि।

नाकका—मिथिया, पल्स, नक्स, मार्क, लाइको, हाइड्रेष्टिस, केलि-ब्राई, जेल्स, हिपर केलि-आयोड, साइना, अरम, आर्स, आर्जेनाई, ऐकोन, एलियम-सिपा।

गलेका—ड्रॉसो, ऐसि-नाई, मार्क, लाइको, लैके, हाइयोस, हिपर, बेल, बैप्टो, एपिस।

श्वासयंत्रका—बेल, आयोड, फास्फो, स्पञ्जिया, कैल्के-कार्ब, सैङ्ग, कास्टि, सल्फ, जिङ्क, मार्क, लैके, एपिस, रास, ब्रायो, आर्स, ऐण्टिमटार्ट, क्यूप्रम, कैलि ब्राई, हिपर, रिउमेक्स।

हृत्पिण्डका—कैक्ट, डिजि ब्राई, अरम।

नाड़ीका—विरे-वि, डिजि आर्स, ऐकोन।

पाकाशयका—ऐण्टि-क्रूड, कार्बो-वेज, लाइको, आर्स, ब्राइयो, कैमो, चेलि, इपि, नक्स, फास्फो, पल्स, सल्फ।

आँतोंका—कार्बो-वेज, कालो सिन्थ, इपि, पोडो, मर्क्य, ऐल्यूमिना, हिपर, ऐल्यूमेन, ब्रायो, ओपि, इथ्यूजा, ऐलो, बार्बेरिस, चेलि, चायना, फास्फो, पल्स, सल्फ, रास, लाइको।

मलनालीका (Rectum)—सल्फ, नक्स, सिपि, मार्क-कॅर, इग्नेसिया, हाइड्रैस्टिस, आर्स, ऐलो, ऐल्य मिना, इस्कु।

मलद्वारका (Anus)—पोडो, प्रम्बम, फास्फो, लाइको, ऐलो, आर्स, साइलो, सिकेलि, सल्फ।

पेटका (यकृतादिका)—प्रम्बम, नक्सवोम, ऐलो, आर्स, वेल, ब्रायो, कैल्के-कार्ब्व, चेलि, चायना, क्रोकस, लेपट्रैण्ड्रा, टेरिबिन्थिना।

पीठका—ऐकोन, सल्फ, सँगु, रास, नेट्रम-म्यु र, चेलि।

गर्दनकी पीठिका—साइक्य, सँगु, मार्क, सिमिसिफ्यूगा, नेट्रम-म्यु र।

पीठकी रीढका—जिङ्क, सल फ, सिपिया, रास।

हड्डीका—फास्फो, अरम, मेजिरियम, रियुटा, मार्क, सिफिलिनम सिलिका, केलि आयोड, एसि-नाई, ऐसिड-फास, कैल्के-कार्ब्व, कैल्के-फास।

सन्धियोंका (Joints)—ब्रायो, थूजा, कोलचि, कैल्मिया, लिडम, केलि-आयोड, फेरम, कास्टि।

मांस पेशियोंका—जिङ्क, रास ऐगारि, एपिस, क्यूप्रम, आर्निका, सिकेलि, हाइयोस, इग्ने, ओपि, स्ट्रैमो।

मूत्रयन्त्रका—कैन्थ, एसि नाई, एसि फास, सल्फ टेरि, ऐकोन, एपिस, आर्जनाई, आर्स, लैके, लाइको मार्क-को साइना, वेलिवाई, थूजा, विरे, ऐल्ब।

पुं० जननेन्द्रियका—श्रोसिमम, तुलसोके पत्ते का रस, ऐसि फास, कोनायम, मार्क रोडो, स्ट्रैफाई, थूजा, एसि पिकि, फास्फो नेट्रम सल्फ, आरम, क्लिमेटिस, मेजेरियम।

स्त्री-जननेन्द्रियका—एपिस, सिपिया पल्स, ऐकोन, प्लैटि, कैल्के-कार्ब्व, नेट्र म्यू, लैके, सल्फ, सिलि-यम, वेल, क्रियोनियस, सिकेलि, सेवाइना, कोना-यम, फास्फो, वाइवर्नम ओपि जिङ्क।

चर्मका—सल फ, थूजा, सिलिका, सिपिया, राम, हिपर ग्रैफा, डाल्के, वेल, एपिस, श्रानिका ऐण्टिमटार्ट, सिडोरिनम, मिजिरियम, मार्क, डालके, आर्स, सिकेलि सोरिनम, आर्टिका युरेन्स, एन्थ्रासिनम।

ाथ पैरका—जिंक, थूजा, सिलिका, स्ट्रैनम, सिकेलि, राम फाइटो, ऐगारिकम, ऐसि फास।

च्छु दोषवाली धातु—सल फ सोरि।

पदंश-दोषवाली धातु—मार्क ऐसि नाई।

मेह-दोषवाली धातु—थूजा।

ा-वात धातु (Hydragonoid constitution)—नेट्रम, सल फ इत्यादि।

हमारी प्रकाशित अन्यान्य पुस्तकें।

(१) **पारिवारिक चिकित्सा।**—समस्त रोग, उनके लक्षण, निदान और चिकित्सा। १४४२ पृष्ठ—सजिल्द मूल्य ३)

(२) **संक्षिप्त पारिवारिक चिकित्सा।**—३३४ पृष्ठ। सजिल्द १॥)

(३) **होमियोपैथिक सार-संग्रह।**—चिकित्सा-ग्रंथ, जेबी गुटका। २३७ पृष्ठ—॥)

(४) **पारिवारिक भेषज-तत्व।**—८०० दवाओं-को मेटोरिया मेडिका। प्राय १६०० पृष्ठ—सजिल्द ५)

(५) **स्त्री-रोग चिकित्सा।**—समस्त स्त्री-रोगोंका इलाज। ४४४ पृष्ठ। सजिल्द २)

(६) **जननेन्द्रियके रोग।**—समस्त रतिज रोगोंकी चिकित्सा। ११८ पृष्ठ। सजिल्द मूल्य १)

(७) **हैजा-चिकित्सा।**—११२ पृष्ठ। मूल्य २)

(८) **बायोकेमिक चिकित्सा।**—इसमें मेटोरिया मेडिका भी है। १७० पृष्ठ। मूल्य १)

(९) **भेषज-विधान।**—फार्माकोपिया। २७४ पृष्ठ। मूल्य १।)

(१०) **व्यवसायी।**—व्यवसाय सिखानेवाली पुस्तक। ३४३ पृष्ठ १)

पता—**एम० भट्टाचार्य एण्ड को०**
इकानमिक फार्मेसी, ८० क्लाइव स्ट्रीट, कलकत्ता।

M. BHATTACHARYYA & CO

ABRIDGED

PRICE LIST.

HOMŒOPATHIC MEDICINES

	1 dr	2 drs	4 drs	1 oz	2 oz	4 oz
	As P	As P	As P	Rs A	Rs A	Rs A
3rd, 6th 12th and 30th potencies (in pills or tinctures) of all medicines	1 3	2 3	4 0	0 8	0 11	1 4
…, 5x 6, 11x 11, 29 100th & 200th potencies	1 6	2 9	[illegible] 0	0 10	1 0	1 8
…x to 6x Trit or crude drug priced @ 1/- per dr	1 9	[illegible]	6 0	0 10	1 1	2 0
…other Tinctures of Polychrests	4 0	6 0	10 0	1 0	2 0	3 8
…xternal Tinctur	1 9	[illegible]	6 0	0 12	1 1	2 [illegible]
	Rs A	Rs A	Rs A	Rs A	Rs A	Rs A
…th and 10th Dilutions	0 3	0 5	0 9	0 14		
…8th 99th and 100th Dilutions	0 4	0 6	0 10	1 0		
…th 198th and 400th	0 12	1 4	2 0	3 0		
…98th Dilution	1 5	2 8	4 0			
…00th	0 6	0 10	1 0	1 6		
…8th	2 0	3 0	7 0			
…9th	1 0	1 8	2 8	4 0		
…00th	0 8	0 12	1 4	2 0	3 0	5 0
…M	1 8	2 8				
…M	2 8	4 0				
…M		5 0				

Tissue Remedies

(OUR MACHINE-MADE)

At a great cost we have installed Tablet and Trituration machines in our laboratory Hence we are in a position to supply first class medicines which can well vie with any foreign make So please make it a point to use Triturations and Tablets made by M Bhattacharyya & Co

Trit —1x @ As 2 , 2x, 3x, 6x, 12x 30x @ -/1/9 and 60x, 100x & 200x @ -/3/- a dram phialful

Tab —3x, 6x, 12x & 30x @ -/5/- , 200x @ -/8/- per ½ oz phialful

Lytics Tablets

3x and 6x potencies @ /7/- , 12x @ -/10/- 30x @ -/12/ and 200x @ Rs 1/4 per ½ oz phialful

N B In case of Trit and Tab the general practice is to supply by phialful e g 1 dr —1 dr phialful, 2 dr — 2 dr phialful and so on

Indian Drugs.

We manufacture Homœopathic medicines from Indian fresh plants and even export to foreign countries

SUNDRIES

(The prices quoted are subject to fluctuation)

Blocks—for marking corks Eng Small 1/10 Large 3/1 Bengali 2/8

,, **Biochemic**—1/8

Brushes—small 1 dr /1/-

Cases—(C B) 1 dr -/6/ 2 dr /10/ per gross

Corks—1 dram /11/ 2 dram 1/ per gross

Distilled Water—(Waldie's) Doz 2/12

Drop conductor—each /0/6 doz -/4/-

Drop Tube—each /1/

Globules and Sugar of Milk—oz As /2/6/- lb Rs 1/8/- (B T), 1/6 (W S)

Glycerine—per oz As /2/6 lb As /11/- and upwards

Hahnemann's Picture Halftone -/2/ each

,, (14 ½"×11") /10/ each

Label Book—each As. /3/ doz Rs 1/12/

,, **Biochemic**—As /4/ each

Measure Glasses 1 dr 2oz and 1 oz /3/ each

Mortar & Pestles (glass) Superior quality American 2 oz 1/4 4 oz 2/ ½ lb 3/8 1b Rs 4/8

Olive Oil—(Bouvale & Tafel) 1 lb bottle Rs. 3/8 other make 1 lb 1/

Phials (tube) 1 dr English Rs 1/5 German 1/1/ Japan 1/ per gross

Scale & Weights—each /6/ 1/8 and upwards

Schuessler's Picture—(14½"×11") /6/- each

Spatula (Horn)—each -/5/-

Spoon (Ivory)—each /2/ and As /8/

Stethoscope—German Silver 1/12 Folding 2/- Folding with finger rest and Screw chestpiece 2/8

Kent, Dr J T—Mat Med Rs 18/8, Philosophy Rs
Repertory Rs 50/
Laurie, Dr J—Epitome Rs 3/4 Family Guide Rs 1/4
Nash, Dr E B—Leaders in Therapeutics Rs 6/12
Ruddock, Dr E H—Vade Mecum Rs 6/

We carry a big stock of other books,

Detailed price-list free on request

BOOKS.

Published by—M BHATTACHARYYA & CO

English—Cholera pp 147, As -/8/
,, Epitome of Homœo Practice As -/8/-
,, Family practice with Anatomy Rs 3/8/-
,, Pharmaceutist's Manual—8th Edition Re 1/-

Burnett's—Consumption Rs 3/8 Gout Rs 2/- Liver Rs. 3/- , Skin, Rs 3/-, Tumour Rs 3/8

Custis—Practice of Medicine Rs 6/-
Hering's—Condensed M M Cloth 14/ half Morrocco 16/-
Knerr's—*Repertory (2 vols) Rs 40/-*

Lippe's—Repertory Rs 8/-
Guzrati—Family practice Rs 1/8
Hindi—Biochemic chikitsa Re 1/
,, Chikitsa Sar (Epitome) -/12/-
,, Cholera pp 384 Rs 1/4
,, Family practice (concised cloth) Rs 1/8 paper 1/-
,, Family practice pp 1200 Rs 4/-
,, Naradeha Panchaya Rs 1 8
Organon Rs 2/
,, Paribarik Veshaj Tattwa (Mat Med) Rs 5/-
,, Pharmacopoeia Rs 1/4
,, Sexual ills and diseases Re 1/-
,, Strirog Chikitsa Rs 2/
,, Byabasayee 1/-

Hindi—Vesaj Laksman Sangraha—2 vols 1st vol Rs 6/-
2nd vol Rs 4/

Repertory (about 300 pages) Rs 6/-

Geeta—In yellow paper -/5/

Mohamodgara— /1/6

Oriya—Family Practice Rs 1/8

„ Mat Medica Rs 4/

Telegu—Epitome of Homœo Practice Re 1/

Urdoo—Family Practice Rs 2/8

„ Mat Med 4/

„ Biochemistry 3/-

বাঙ্গালা পুস্তক।

শ্রীমহেশচন্দ্র ভট্টাচার্য্য এণ্ড কোং প্রকাশিত।

ওলাউঠা চিকিৎসা—(৮ম সংস্করণ) ইহাতে রোগের আক্রমণ লক্ষণ ও তাহার প্রতিষেধক উপায় সরল ভাষায় বর্ণিত হইয়াছে। মূল্য।

ওলাউঠা তত্ত্ব ও চিকিৎসা—(২য় সংস্করণ) ইহাতে ওলাউঠার ইতিহাস কারণতত্ত্ব প্রতিষেধক উপায় রোগী শুশ্রূষা ঔষধ প্রয়োগবিধি ও পথ্যাপথ্যাদি সহজ ভাষায় বর্ণিত হইয়াছে। মূল্য ৷৵

জননেন্দ্রিয়ের পীড়া—উপদংশ প্রমেহ প্রভৃতি রহিত রা। সম্বলিত (৪র্থ সংস্করণ) মূল্য ॥

নরদেহ পরিচয়—ইহাতে মনুষ্যদেহের অঙ্গপ্রত্যঙ্গ ও যন্ত্রাদির সবিস্তার বিবরণ দেওয়া হইয়াছে। সকল সম্প্রদায়ের চিকিৎসক সাধারণ গৃহস্থ সকলেরই ইহা প্রয়োজনীয়। ২৯ খানি সুন্দর চিত্রের সাহায্যে বর্ণিত—পৃষ্ঠা ১১২ ৪র্থ সংস্করণ। মূল্য ।০

পারিবারিক চিকিৎসা—গৃহস্থ ও শিক্ষার্থীর পক্ষে উপযোগী ভাষা সরল অল্প শিক্ষিত লোকেও ইহার সাহায্যে ঔষধ নির্বাচন করিতে পারিবেন। স্ত্রী ও শিশু চিকিৎসা বিশেষভাবে লিখিত হইয়াছে। (১০ম সংস্করণ সচিত্র ৯৯২ পৃষ্ঠা) মূল্য ৩ টাকা মাত্র।

পারিবারিক চিকিৎসা (সংক্ষিপ্ত)—(৫ম সংস্করণ ২৪১ পৃষ্ঠা) প্রথম শিক্ষার্থীর পক্ষে বিশেষ প্রয়োজনীয়। মূল্য ৷৵

F P 20000—21 9-36